भक्तामर स्तोत्र के बाद मालवधरा पर पुनः
वर्तमान जिनशासन नायक की 21 वीं सदी
की नवीनतम अद्‌भुत स्तुति

परम मुमुक्षु मुनि श्री प्रणम्यसागरजी महाराज विरचित

श्री वर्धमान स्तोत्र

(संस्कृत एवं हिन्दी)

पद्यानुवाद, पूजन, ऋद्धि मंत्र,
जाप्य मंत्र, हिन्दी अर्थ सहित

* प्रकाशक *
आर्हत विद्या प्रकाशन
गोटेगाँव

कृति
श्री वर्धमान स्तोत्र

आशीर्वाद
परम पूज्य आचार्य **श्री विद्यासागरजी महाराज**

रचयिता
परम मुमुक्षु मुनि **श्री प्रणम्य सागरजी महाराज**

पद्यानुवाद, पूजन, मंत्र एवं अर्थ
परम मुमुक्षु मुनि **श्री प्रणम्य सागरजी महाराज**

संस्करण
प्रथम - जनवरी 2014, 2000 प्रतियाँ
द्वितीय-13 अप्रैल 2014, महावीर जयंती, 1000 प्रतियाँ

मूल्य - 20 रु. (पुनः प्रकाशन हेतु)

प्राप्ति स्थान
श्री नवीन जैन, गोटेगाँव, 094258-37476
श्री ओम अग्रवाल, रतलाम, 094251-03766

अवसर
रतलाम में कृति के पूर्ण होने पर श्री वर्धमान स्तोत्र विधान
दिनांक 19.1.2014, रविवार

पूण्यार्जक परिवार
विजयकुमार अग्रवाल
ओम अग्रवाल
शुभम् कन्स्ट्रक्शन, रतलाम

मुद्रक
छाजेड़ प्रिन्टरी प्रा.लि., 108, स्टेशन रोड, रतलाम

प्रस्तावना

पूज्य 108 मुनि प्रणम्यसागरजी द्वारा रचित श्री वर्धमान स्तोत्र 64 छन्दों में निबद्ध संस्कृत भाषा का सचमुच एक प्रणम्य काव्य है। मुनिश्री के लिए काव्य रचना अपने आप में कोई इष्ट नहीं है। वह तो एक साधन भर, एक बहाना भर है, जो मुनि को मोक्षमार्ग पर चलने की प्रेरणा देने वाले तीर्थंकर भगवान महावीर से जोड़ता है। मुनि में महावीर जैसा बनने की भावना जगाता है। जो संस्कृत भाषा को ठीक तरीके से नहीं समझते उनके लिए मुनिश्री ने श्री वर्धमान स्तोत्र का पद्यानुवाद हिन्दी में भी किया है।

जैन धर्म में जैन मुनि रचनाकारों द्वारा स्तोत्र रचना की एक लम्बी परम्परा है। आचार्य समन्तभद्र का स्वयंभू स्तोत्र और आचार्य मानतुंग का भक्तामर स्तोत्र इस परम्परा की उल्लेखनीय रचनाएँ हैं। किन्तु कुछ समय से यह परम्परा विच्छेद जैसी स्थिति को प्राप्त हो गई थी। संस्कृत भाषा में रचना तो बड़ी ही कठिन लगने लगी थी यहाँ तक कि पढ़ने-लिखने में भी इस भाषा का उपयोग कम एवं कठिन हो गया। ऐसे समय में मुनि श्री प्रणम्य सागरजी ने अपने काव्य कौशल से उपमा, रुपक, अतिशयोक्ति, अनुप्रास आदि अलंकारों का प्रयोग कर श्री वर्धमान स्तोत्र की रचना की।

यह हमारे पुण्य का ही उदय है कि जैन धर्म के प्रमुख स्तोत्रों की रचना मालवा प्रान्त की भूमि पर हुयी हैं। जैसे भक्तामर स्तोत्र की रचना धार में और कल्याण मंदिर स्तोत्र की उज्जैन में हुयी। उसी तारतम्य में समाधि तंत्र जैसे ग्रन्थों की संस्कृत भाषा में टीका करने वाले पू. मुनिश्री प्रणम्य सागरजी महाराज द्वारा शासन नायक भगवान महावीर के गुणों को कहने वाला और दिगम्बर सम्प्रदाय के स्तोत्रों में शासन नायक के नाम से प्रथम स्तोत्र श्री वर्धमान स्तोत्र की रचना रतलाम में सम्पन्न हुई।

जैन धर्म में अरिहन्तों-तीर्थंकरों की चौंसठ ऋद्धियाँ होती हैं। उन्हीं ऋद्धियों का कथन करते हुए श्री वर्धमान स्तोत्र 64 छन्दों में निबद्ध है। इस स्तोत्र का प्रत्येक छन्द स्वयं में ही एक ऋद्धि मंत्र है। श्री वर्धमान स्तोत्र की रचना श्री वर्धमान स्वामी

की पूजन के साथ सम्पन्न हुई है। इसका उपयोग आत्मकल्याण की भावना वाले श्रावकों के लिए पाठ और चिन्तन रूप में सहायक बनेगा। साथ ही दीपावली की पूजा में भी कार्यकारी होगा।

मुनि प्रणम्यसागरजी की रचना प्रेरणा भले ही मानतुंग का भक्तामर स्तोत्र रहा हो पर भक्तामर और श्री वर्धमान स्तोत्र में एक मौलिक अन्तर तो यही है कि भक्तामर स्तोत्र आदिनाथ की स्तुति का काव्य होते हुए भी किसी भी तीर्थंकर का स्तुति काव्य है। यदि बताया न जाय कि यह आदिनाथ की स्तुति है तो वह 23 में से किसी भी अन्य तीर्थंकर पर चरितार्थ हुई मानी जा सकती है। उसमें आदिनाथ का विशिष्ट स्वरूप कहीं नहीं झलकता। वह अन्य किसी तीर्थंकर पर भी समान रूप से घटित होती है। उसे तीर्थंकर मात्र की भक्ति और भावपूर्ण स्तुति कहा जा सकता है। कदाचित् इसीलिए उसे आदिनाथ स्तोत्र के नाम से कम और भक्तामर स्तोत्र के नाम से अधिक जाना जाता है। इसके विपरीत श्री वर्धमान स्तोत्र में भगवान वर्धमान की स्पष्ट और एकाग्र उपस्थिति है। इसके लिए कवि मुनि प्रणम्यसागर ने अपनी भक्तिपरकता में महावीर के विभिन्न नामों तथा उनके जीवन वृत्त की घटनाओं/इतिवृत्त का संक्षिप्त सूक्ष्म लेकिन प्रत्यक्ष उपयोग किया है। चन्दना का महत्वपूर्ण घटनाक्रम भी रचना में आया है।

जैसे भक्तामर स्तोत्र में प्रथम शब्द ही 'भक्तामर' है, ठीक उसी तरह इस स्तोत्र का भी प्रथम शब्द 'वर्धमान' है। चन्दना का महत्वपूर्ण घटनाक्रम का वर्णन भी अद्वितीय तरीके से प्रस्तुत किया गया है। इस प्रकार न केवल भक्ति और अनुभूति की तीव्रता की दृष्टि से बल्कि अभिव्यक्ति कौशल की दृष्टि से भी यह स्तुत्य स्तोत्र है।

मैं आशा करता हूँ इसे व्यापक लोकप्रियता मिलेगी और यह भव्य जीवों में भक्तिभाव जागृत कर उन्हें वर्धमान भगवान् जैसा बनने की प्रेरणा दे सकेगा।

- डॉ. जयकुमार जलज
30, इन्दिरा नगर, रतलाम (म.प्र.)
फोन 07412-260911, मो. 94071-08729

स्तुति जगत का नवीन नक्षत्र : श्री वर्धमान स्तोत्र

भारतीय संस्कृति में अपने आराध्य की स्तुति, गुणगान और प्रार्थना की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है भारत में सभ्यता के प्राचीनतम अवशेषों ''मोहें जो दड़ो''(मुर्दो का टीला) में भी जिसे ''मोहन जोदड़ो'' कहा जाता है, जो पुरातत्वीय अवशेष तथा शिलालेख प्राप्त हुए है वे भी काव्यात्मक शैली, श्लोक, मंत्र, ऋचाएं और यंत्रो के रूप में मिलते हैं। भारत की प्राचीनतम संस्कृतियों में श्रमण संस्कृति और वैदिक संस्कृति प्रमुख है। श्रमण संस्कृति (जैन संस्कृति) में अध्यात्म प्रमुख संस्कृति होते हुए भी स्तुतियां प्रचुरता से मिलती है। वैदिक संस्कृति तो अपने श्रुतियों एवं स्मृतियों की प्रमुखता के कारण और अपने चार वेदों ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद, वेदांग, 18 पुराणों तथा 108 उपनिषदों के कारण ही वैदिक संस्कृति कहलाती है। ऋग्वेद और सामवेद तो पूर्णतया स्तुति परक ऋचाओं और मंत्रो से भरे पड़े है।

प्रस्तुत **'श्री वर्धमान स्तोत्र'** विद्वान लेखक सिद्धहस्त कवि मुनिश्री प्रणम्य सागर जी महाराज की भाव, भाषा और उत्साह से ओतप्रोत स्तुति काव्य है जिसके कथा नायक स्वयं तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी है। उनके गुणों की ऊर्जा एवं ज्योति इसे स्तुति जगत के नवीन नक्षत्र की प्रतिष्ठा देगी और जो हमें निश्चित ही भक्ति के माध्यम से मोक्ष मार्ग की ओर प्रवृत करेगा। वैदिक संस्कृति से भिन्न जैन संस्कृति में तो व्यक्ति पूजा के स्थान पर गुणों की ही पूजा की जाती है। जैन आगम के सर्वप्रमुख सूत्र ग्रंथ श्री ''तत्वार्थसूत्र'' या मोक्षशास्त्र के मंगलाचरण में परम पूज्य उमास्वामी ने स्पष्ट कर दिया है–

मोक्षमार्गस्य नेत्तारं, भेत्तारं कर्म भू भूताम्।
ज्ञातारं विश्वतत्वानाम् वन्दे तद्गुण लब्धये।।

स्तुति–स्तोत्रों की संभावित समस्त आलोचनाओं प्रत्यालोचनाओं की यथाषक्ति सुदृढ़ किले बन्दी करने के पश्चात् आइए अब हम बालयोगी मनोज्ञमुनि शान्त परम निस्प्रही परम मुमुक्षु मुनि श्री प्रणम्य सागर जी महाराज की चैतन्य लेखनी से निसृत ''श्री वर्धमान स्तोत्र'' के ध्वनि लोक में प्रवेश करें। यहाँ देव भाषा संस्कृत में ऋचाओं की पाप तिमिर हारिणी ज्योति की गूंज के साथ भारत भारती हिन्दी की आनन्द दायिनी फुहारों से मन प्रफुल्लित हो जाता है।

वर्धमान स्तोत्र के दूसरे ही काव्य से स्तोत्र का प्रयोजन, और अहंकार विहीन चित्त की सरलता–सहजता (दीनता नहीं) स्पष्ट हो जाती है। यहां मुझे राष्ट्रकवि स्व. श्री मैथिलीशरण

गुप्ता की वे पंक्तियां स्मरण हो आती है जिनमें वे कहते है–

राम तुम्हारा चरित स्वयं ही काव्य है।
कोई कवि हो जाय सहज सम्भाव्य है।।

जैन आगम का मूल स्त्रोत तीर्थंकर भगवान महावीर द्वारा उनके समवशरण में दिये गये उपदेश हैं। इसी कारण उसे जैनागम कहा जाता है। भगवान केवलज्ञानी थे अत: सम्पूर्ण चराचर से संबंधित ज्ञान उनके ज्ञान में झलकता था जिसे वे 'हस्तामलक' हथेली पर रखे आँवले की भांति सम्पूर्ण पारदर्षिता के साथ बिना किसी लौकिक अथवा अलौकिक सहायता अथवा व्यवधान के साथ स्पष्ट निहार कर व्याख्या कर सकते थे। उनकी मेघ गर्जना जैसी अनक्षरी वाणी की व्याख्या उनके महापण्डित शिष्य प्रथम गणधर गौतम स्वामी द्वारा 18 महाभाषाओं तथा 700 लघु भाषाओं में इस प्रकार की गई कि भगवान के वह उपदेश जीवजगत के प्रत्येक प्राणी को उसी की भाषा में समझ में आ जाते थे। यही सम्पूर्ण ''आगम या जिनवाणी'' है जो गंगा की भांति ''वीर हिमाचल तें निकसी गुरू गौतम के मुख कुण्ड परी'' है।

मुनि श्री प्रणम्य सागर जी की इस प्रणम्य कृति का भी उद्देश्य भी यही है कि भक्ति उपवन से चुनकर लाये गये रूचिर रंगों के इन शब्द पुष्पों की सुरभि से भक्त का हृदय प्रभु के चरणों की भक्ति में संकेन्द्रित हो जायें और उससे उत्पन्न ऊर्जा से उसके दुष्टाष्ट कर्मो का दहन हो जाये ठीक उसी प्रकार जैसे सूक्ष्मदर्शी यंत्र के कारण प्रकाश को एक बिन्दु पर संकेद्रित करने से उत्पन्न ऊर्जा सधनीकृत होकर अग्नि उत्पन्न कर देती है।

मुनि श्री प्रणम्य सागर जी महाराज ने पाप रोग को नाष करने के लिये स्तोत्र रूपी अपूर्व औषधि का निर्माण किया है। इन औघड़ दानी वैद्यराज ने अन्य ''चतुर'' वैद्यो की भांति औषधि की गोपनीयता बना कर नही रखी है। औषधि लेने का समय, मात्रा, अनुपान और वर्जनीय बातों का खुलासा एक साथ कर दिया है।

स्तुति के 64 में से प्रत्येक छन्द किसी न किसी रोग के स्थायी निवारण का साधन है। यह 64 छन्द 64 ऋद्धियों के प्रतीक हैं। इस स्तोत्र का एक ही लक्ष्य है, एक ही कसौटी है कि इसके पढ़ने, मनन करने से हमारी वृत्ति और प्रवृत्ति 'यावन्न भक्ति करणाय मन: प्रयास: । अर्थात् हमारा मन प्रभु की भक्ति करने में प्रवृत्त हो जाए।

मुनिश्री द्वारा रचित श्री वर्धमान स्तोत्र में प्रयुक्त शब्द, शैली और भाव भले ही पूर्व में अन्य किसी काव्य या स्तोत्र में वर्णित हो चुके हों किन्तु उनकी अवधारणा और अभिव्यक्ति सर्वथा निराली तथा अपूर्व है। उदाहरण के लिये भगवान के अतिशयों और अष्ट प्रातिहार्यों का

विवरण और वे किस बात के प्रतीक है यह बात बिल्कुल नवीन तथा चमत्कारी है। चौदहवें तथा पन्द्रहवें काव्य में प्रभु के जन्म एवं केवल ज्ञान के दस अतिशय एक ही काव्य माला में पिरोये गये हैं। यह ज्ञान और बुद्धि का चमत्कार ही है। पुराणों में नारी का स्थान माँ, देवी, भगवती बताते हुए कहा गया है ''यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता'' किन्तु वास्तविकता बिल्कुल उलट है। आज से 2550 वर्ष पूर्व ही भगवान महावीर ने चन्दना (जो उनकी गृहस्थावस्था की मौसी थी) के बहाने नारी की दयनीय दशा, बन्धन, संकट आदि से निकाल कर समाज में उचित स्थान दिलाने का जो महान उपक्रम किया था उसकी ओर समाज का ध्यान आकृष्ट कराने के लिये हम मुनिश्री प्रणम्य सागर जी को कृतज्ञ भाव से प्रणाम करते है काव्य क्र. 22 और आगे चलकर 23 वां काव्य प्रभु के समवषरण के 5000 धनुष ऊंचे होने का नया ही कारण बताता है। मुनिश्री कहते है कि मिथ्यादृष्टि जीवों को प्रभु के मुखदर्शन कर पाने का पुण्य ही नही है कि वे प्रभु की इतनी ऊंची गन्धकुटी के दर्शन कर सकें।

28 वे काव्य में तीन छत्रों द्वारा प्रकारान्तर से अपनी श्रेष्ठता का कथन और 29 वे काव्य में सिंहासन पर भी चार अंगुल ऊपर बैठने का बिल्कुल नवीन कारण बताया गया है। यह सभी उदाहरण कवि हृदय मुनि श्री की सर्वथा विलक्षण और उर्वरा बुद्धि का दिग्दर्शन कराते हैं। बत्तीसवां काव्य एक नवीन उद्भावना प्रस्तुत करता है जब मुनिश्री कहते है कि हे प्रभु ! आपके कर्मों के साथ रति, हास्य जैसे नौ कर्म भी नष्ट हो गये है किन्तु आपके भक्त श्रोताओं के मन में आपकी वाणी सुनाकर हास्य और रति दोनों उत्पन्न हो जाते है। अशोक वृक्ष के नाम की व्युत्पत्ति भी आपके सामीप्य से अरति और अशोक बुद्धि के कारण ''अशोक'' हो गई है। काम वेदना नाशक काव्य 35 में पुष्प के नपुंसक वेद का होने के कारण आपकी सन्निधि में पुष्पवृष्टि तीनों वेदों (स्त्री वेद पुरूष वेद और नपुंसक वेद) के क्षरण का प्रतीक है। धन्य है मुनिश्री की कल्पना की उड़ान ....। इसी प्रकार 38 वें काव्य में प्रभु के पद विहार में देवों द्वारा श्री चरणो के नीचे निर्मित सुगन्धित सुवर्णमयी कमलों की भांति यदि मेरे हृदय प्रदेश में उपस्थित आपकी छबि के कारण श्रेष्ठ और सुरभित हो जाये तो ''**किम् आश्चर्यम् ?** काव्य 39 ''**अर्ध मागधी**'' का नया अर्थ दे जाता है। 43 वां काव्य भक्ति, मुक्ति शक्ति और ज्ञान की नवीन परिभाषाएँ गढ़ता है।

इस पुस्तक में मुनिश्री ने दीपावली पूजन विधि, जो भगवान वर्धमान महावीर के जीवन से जुड़ी परम्परा है, व्यापार के बही खाते में अंकित किये जाने वाला लिखित सिद्धि यंत्र. मंगलाष्टक स्तोत्र का काव्यमय हिन्दी अनुवाद, महावीर विधान, अभिषेक विधि, वृहद्

शान्तिधारा एवं नित्यनियम पूजा विधि सम्मिलित करके । इस पद वदम या एकोहं बहुस्यामि'' को चरितार्थ किया है। मुनिश्री की यह योजना सोने में सुगन्धि भर देने''या प्बपदह वद जीम बंम की ''स्वयं सम्पूर्ण'' होने की प्रक्रिया है। मुनिश्री के इस प्रयास से यह स्तोत्र अज्ञ और विज्ञ दोनों के लिये उपयोगी बन गया है।

कुल मिला कर यह समीक्षा महातेजस्वी सूर्य की आरती छोटे से दीप से करने का प्रयास मात्र है। मुनिश्री प्रणम्य सागर जी की प्रस्तुत रचना का प्रत्येक छंद उनके प्रणम्य नाम को सार्थक करता है। अन्त में मेरा निवेदन यही है कि श्री गुरू की यह कृपा मेरे पढ़ने–लिखने की प्रेरणा और विद्यार्थी का अभ्यास मात्र समझें। इसमें त्रुटियाँ होना सम्भव ही नही आवश्यक है। फिर भी मुनि श्री से यही प्रार्थना है कि मुझे ऐसे अवसर मिलते रहें ताकि मै ''**अल्पश्रुतं श्रुतवतां परिहास धाम:**'' आपकी भक्ति के कारण मुखरीकृत बना रहूँ। आपकी इस कृपा के लिये मेरे पास कोई शब्द सामर्थ्य नही है जिससे मै अपने आनन्द को व्यक्त कर सकूँ धन्यवाद देना तो दूर।

श्री गुरू चरण चंचरीक

रमेशचन्द्र मनयां जैन

कल्पतरू हाउस

भोपाल

दिनांक 27/02/14

कृति के नेपथ्य से

आचार्य कुन्दकुन्द देव ने अष्ट पाहुड में कहा है कि 'अरहंते सुहभत्ती सम्मत्तं' अर्थात् भगवान में शुभ भक्ति होना सम्यग्दर्शन है। पूर्वाचार्यों ने इसी कारण अरहन्त भगवान की भक्ति समय–समय पर की है। आचार्य कुन्दकुन्द देव की प्राकृत भक्तियाँ और आचार्य पूज्यपाद देव की संस्कृत भक्तियाँ इसी अभिप्राय का अप्रतिम उदाहरण हैं। यह बात अलग है कि आज इन भक्तियों का ज्ञान श्रावक को बिल्कुल ही नहीं है। ये भक्तियाँ केवल श्रमण–आदि त्यागी व्रती के लिए ही आवश्यक क्रिया में उपयोगी रह गई हैं। त्यागी–व्रती निरपेक्ष–निराकांक्ष होते हैं इसलिए वह इन भक्तियों को उपयोगी समझते हैं। सामान्य गृहस्थश्रावक या सरागी अविरती जीव केवल उन्हीं स्तोत्र, भक्ति पाठ पर विश्वास करता है जिससे उसको कुछ चमत्कारिक फल की आशा हो।

वर्तमान में वही स्तोत्र ज्यादा प्रचलित हैं जिनके साथ किसी चमत्कारिक घटना का वर्णन जुड़ा है। ये चमत्कार उन मनीषियों की भगवान के प्रति दृढ़ आस्था के कारण हुए थे।

वस्तुतः भावों में उत्कृष्टता किसी कष्ट के समय, उपसर्ग आदि के समय आस्था की दृढ़ता से आती है। यह एकान्त नहीं है कि कष्ट या उपसर्ग को जीतने से ही भावों में उत्कृष्टता आती है। भावों की उत्कृष्टता के लिए निमित्त कुछ भी हो सकते हैं। कभी–कभी अपने भावों से भगवान की प्रतिमा में अतिशय दिखता है तो कभी–कभी प्रतिमा की अतिशयता के कारण अपने भावों में अतिशय दिखता है। यह परस्पर निमित्त–नैमित्तिक सम्बन्ध है। इस सम्बन्ध में निमित्त और उपादान दोनों की योग्यता से ही नैमित्तिक भाव या कार्य घटित होता है। कभी भाव बलवान हो तो प्रतिमा में अतिशय या प्रतिमा ही प्रकट हो जाती है। जैसे मैना सुन्दरी, सेठ धनंजय और समन्तभद्र आदि

ने कर दिखाया। भक्तामर आदि स्तोत्र की रचना भी इसी श्रेणी में आती है। कभी सम्मुख प्रतिमा के कारण हृदय में अतिशयकारी भाव उत्पन्न होते हैं। जैसे टीले के नीचे महावीर की प्रतिमा से गाय का दूध झरना, इन्द्रभूति का मान स्तम्भ की प्रतिमा को देखकर सम्यग्दर्शन होना और गौतम गणधर द्वारा 'जयति भगवान्' इत्यादि चैत्य भक्ति करना। वस्तुतः यह भी किसी चमत्कार से कम नहीं है और इस प्रकार रचित काव्य भी अतिशयकारी और चमत्कारी होते हैं। प्रासंगिक काव्य 'श्री वर्धमान स्तोत्र' इसी श्रेणी का काव्य समझना चाहिए।

उज्जैन चातुर्मास के बाद अतिशय क्षेत्र बनेड़ियाजी आते हुए अकस्मात् भगवान महावीर स्वामी की स्तुति करने का भाव बना और क्षेत्र पर आकर श्री अजितनाथ भगवान की प्रतिमा का दर्शन करके इतनी विशुद्धि और साहस बढ़ा कि चिन्तित कार्य को प्रारम्भ कर दिया। तीसरे दिन विहार किया और बड़नगर के प्रवास के बाद रतलाम आना हुआ। इसी बीच स्तोत्र की रचना पूर्ण हुई। संस्कृत भाषा में इस स्तोत्र में भगवान के पाँच नामों का सकारण उल्लेख, जन्म के दस अतिशय एक ही काव्य नं. 14 में, केवलज्ञान के दश अतिशय भी एक ही काव्य नं. 15 में निबद्ध हैं। इसके साथ ही देवकृत चौदह अतिशयों का वर्णन काव्य 36 से 41 तक में किया है। अष्ट प्रातिहार्यों का वर्णन स्तुति काव्य 28 से 35 तक में हैं। अष्ट प्रतिहार्यों का वर्णन चार कषाय और नौ–नौ कषाय का भगवान में अभाव होने से घटित किया है। इन्द्रभूति, चन्दना, भगवान के द्रव्य, गुण, पर्यायों का चिन्तन और उसकी कामना सहज भावों में आती गई और स्तोत्र पूर्ण हो गया। जिस दिन स्तोत्र को पूर्ण किया उसी दिन रतलाम में प्रवेश हुआ और भगवान महावीर स्वामी के तोपखाना मन्दिर में दर्शन हुए। दूसरे ही दिन एक खोई हुई, लिखी हुई डायरी एक व्यक्ति स्वयं लेकर आ गया जिसका बहुत दिनों से कोई पता नहीं चल रहा था।

भगवान महावीर स्वामी जो कि वर्तमान में जिनशासन नायक हैं। उन्हीं का तीर्थ चल रहा है। ऐसे तीर्थंकर वर्तमान शासन नायक की इस स्तुति करके मेरा जन्म सफल हो गया।

इस स्तोत्र का लाभ सभी भव्य आत्माओं को हो इस भावना से इसका हिन्दी में पद्यानुवाद भी पूर्ण किया। भगवान महावीर की पूजा, जयमाला, रिद्धि मंत्र और जाप मंत्र की रचना का कार्य भी साथ ही पूर्ण कर दिया जिससे यह स्तोत्र एक विधान का रूप ले लिया है।

दीपावली के दिन भी इस स्तोत्र का पाठ और पूजन करके भव्य सुधीजन उस दिन की पूजा क्रिया सम्पन्न करें।

सभी तरह के रोग, शोक, वियोग, जन्म, दुःख, सम्पत्ति, पुत्र आदि सौभाग्य की कमी को इस स्तोत्र की पूजन, विधान, नित्य पाठ, व्रत, एकाशन आदि से पुण्य अर्जन करके प्राप्त करें और हमारी तरह सम्यक्त्व की विशुद्धि को बढ़ावें तथा आत्मकल्याण हेतु मोक्ष पथ पर देव, शास्त्र, गुरु के प्रति आस्थावान होते हुए निरन्तर बढ़ते रहें, यही पुनीत भावना है।

परम उपकारी आचार्य गुरुदेव श्री विद्यासागरजी महाराज की कृपा से जो कुछ थोड़ा सा संस्कृत, साहित्य आदि का ज्ञान अर्जित हुआ है, उन्हीं आचार्य गुरुदेव के महान् आशीषों से मुझ अल्पज्ञ में यह सामर्थ्य आयी है ऐसे गुरुदेव के मोक्षगामी पावन चरणों में कोटिशः नमोऽस्तु। इत्यलम्।

– परम मुमुक्षु मुनिश्री

रतलाम
13 जनवरी 2014
पौष शुक्ला 13, सोमवार

दीपावली विधि

अनादिकाल से भरत क्षेत्र में अनंत चौबीसी होती आयी हैं, इसी क्रम में इस युग में भी आदिनाथ से लेकर महावीर पर्यन्त चौबीस तीर्थंकर हुए। तेईसवें तीर्थंकर पार्श्वनाथ के 256 वर्ष साढ़े तीन माह के बाद अन्तिम तीर्थंकर भगवान् महावीर को कार्तिक वदी अमावस्या को मोक्ष प्राप्त हुआ था तथा उनके प्रथम गणधर इन्द्रभूति गौतम को अपराह्निक काल में उसी दिन कैवल्य की प्राप्ति हुई थी, इसी के प्रतीक रूप में कार्तिक वदी अमावस्या को दीपावली पर्व मनाया जाता है।

प्रातः काल पूजा विधि (मंदिर में)– प्रातः काल सूर्योदय के समय स्नानादि करके पवित्र वस्त्र पहनकर जिनेन्द्र देव के मन्दिरजी में परिवार के साथ पहुँच कर जिनेन्द्र देव की वन्दना करनी चाहिये। तदुपरान्त थाली में अथवा मूलनायक भगवान की वेदी पर चार–चार बाती वाले सोलह दीपक प्रज्ज्वलित करना चाहिए तथा भगवान् महावीर स्वामी की पूजन, निर्वाणकाण्ड पढ़ने के पश्चात् महावीर स्वामी के मोक्षकल्याणक का अर्घ्य बोलकर निर्वाण लाडू चढ़ाना चाहिए। उस दिन यह वर्धमान स्तोत्र संस्कृत या हिन्दी में अवश्य परिवारजनों के साथ मिलकर सामूहिक पाठ करते हुए पढ़ें।

निर्वाण लाडू चढ़ाने वाले दिन सायं को श्रावक गण अपने–अपने घरों में दीपावली पूजन करते हैं। दीपकों का मनोहर प्रकाश करते हैं। श्री जिनमंदिरजी में व अपनी दुकानों पर दीपकों को सजाते हैं और प्रमुदित होते हैं। सुबह महावीर भगवान की पूजन, विधान अष्ट द्रव्य से करें। शाम को घर या दुकान पर पाठ करें।

संध्याकाल में पूजा विधि (घर में) – अपराह्नकाल गौधुली बेला

(सायं 4 से 7 बजे तक) में घर के ईशान कोण (उत्तर पूर्व में) अथवा घर के मुख्य कमरे में पूर्व की दीवार अथवा सुविधानुसार दीवार पर माण्डना (श्री का पर्वताकार लेखन) बनाकर चौकी के ऊपर जिनवाणी एवं भगवान महावीर स्वामी की तस्वीर रखनी चाहिये। अन्य देवी–देवताओं (यथा सरस्वती, लक्ष्मी गणेशजी आदि) के चित्रादि नहीं रखना चाहिये क्योंकि जैन धर्म में इसका कोई उल्लेख नहीं है। एक पाटे पर अष्टद्रव्य की थाली, दूसरे पाटे पर द्रव्य चढ़ाने के लिए खाली थाली में स्वस्तिक बनाएँ। घर के मुखिया अथवा किसी अन्य सदस्य को एवं सभी सदस्यों को शुद्ध धोती–दुपट्टा पहनकर दीपमालिका के बायीं तरफ आसन लगाकर बैठना चाहिए। एक पाटे पर चांवल से स्वस्तिक बनाकर उस पर महावीर स्वामी का मनोहर फोटो, जिनवाणी, दाहिनी तरफ घी का दीपक, बाईं तरफ धूपदान, मध्य में मंगल कलश स्थापित करें। सोलह कारण भावना के प्रतीप रूप चौकी पर चार–चार बातियों वाले सोलह दीपक प्रज्ज्वलित करना चाहिए। इन्हीं सोलहकारण भावनाओं को भाकर तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध भगवान् महावीर स्वामी ने किया था इसी के प्रतीक स्वरूप सोलह दीपक चार–चार बातियों वाले जलाये जाते हैं। (16×4=64) यह 64 का अंक चौसठ ऋद्धि का प्रतीक हैं। भगवान महावीर चौंसठ ऋद्धियों से युक्त थे। इसलिए पाठ करते समय प्रत्येक काव्य के बाद लिखे अर्घ का मंत्र बोलते हुए पुष्पांजलि क्षेपण करें। दीपकों में शुद्ध देशी घी उपयुक्त होता है। (घृत की अनुपलब्धि पर यथायोग्य शुद्ध तेल का प्रयोग किया जा सकता है।) दीपकों पर सोलह भावना अंकित करनी चाहिए। इन्हें जलाने के पश्चात् दीपावली पूजन, सरस्वती (जिनवाणी) पूजन, चौंसठ ऋद्धि का अर्घ्य बोलना चाहिये। पूजन धुली हुई अष्ट द्रव्य से करनी चाहिए। पूजन से पूर्व तिलक एवं मौली बन्धन सभी को करना चाहिये।

दुकान पर पूजन – इसी प्रकार दुकान पर भी पूजन करनी चाहिए अथवा लघुरुप में पंचपरमेष्ठी के प्रतीक रूप पाँच दीपक प्रज्ज्वलित कर पूजन करना चाहिए। पूजन करने से पूर्व अष्ट द्रव्य तैयार कर एक चौकी पर रख लें। दूसरी चौकी पर थाली में स्वस्तिक बनायें, मंगल कलश की स्थापना करें। गद्दी पर बही खाता, कलम–दवात, रुपयों की थैली आदि रखें।

एक चौकी पर नए बही के अन्दर सीधे पृष्ठ पर ऊपर हल्दी या रोली से स्वस्तिक बनायें तथा श्री का पर्वताकार लेखन करें।

जैन समाज में भी इस दिन बही खाते बदलने की और नया कार्य प्रारम्भ करने की परम्परा चली आ रही है क्योंकि वह युग परिवर्तन का समय था इसलिए नई व्यवस्था के प्रारम्भ के योग्य सर्वश्रेष्ठ शुभ यह समय माना गया।

पूजन विसर्जन – शांतिपाठ एवं विसर्जन करके घर का एक व्यक्ति अथवा बारी–बारी सभी व्यक्ति मुख्य दीपक को अखण्ड प्रज्ज्वलित करते हुए रात भर णमोकार मंत्र जाप अथवा पाठ या आदिनाथ स्तोत्र (भक्तामर स्तोत्र), वर्धमान स्तोत्र आदि पाठ करते हुये शक्ति अनुसार रात्रि जागरण करना चाहिए। यदि रात्रि जागरण नहीं कर सके तो कम से कम मुख्य दीपक में यथायोग्य घृत भरकर उसे जाली से ढंक कर उसी स्थान पर रात भर जलने देना चाहिए शेष दीपकों में से एक दीपक मंदिर में भेज देना चाहिए। यदि निकट में कोई सम्बन्धी रहते हैं तो वहाँ भी दीपक भेजा जा सकता है। अथवा शेष दीपक घर के मुख्य दरवाजे पर एवं मुख्य–मुख्य स्थानों पर रखे जा सकते हैं। मिष्ठान आदि का वितरण करना है तो पूजा समाप्ति के पश्चात् पूजन स्थल से थोड़ा हटकर वितरित करें।

पूजा के पश्चात् निर्माल्य सामग्री पशु–पक्षियों को अथवा मंदिर के माली को दी जा सकती है। चौबीस पत्तों वाली आम या आशापाल की बन्दनवार बनाकर दरवाजे के बाहर बांधनी चाहिए जो चौबीस तीर्थंकरों की प्रतीक है।

(समुच्चय मंत्र – ॐ ह्रीं चतु:षष्टिऋद्धिभ्यो नम:)

नोट –दीपावली के दिन पटाखे, अनार बिलकुल न जलावें। इससे लाखों जीवों का घात होता है, पर्यावरण प्रदूषित होता है, स्वयं को भी हानि हो जाती है और भारी पाप का बन्ध होता है। अत: अपने बच्चों को इस बुरी आदत से रोकें।

सामग्री–अष्ट द्रव्य की थाली, दीपक, मंगलकलश, पीली सरसों, श्रीफल, जिनवाणी, 2 चौकी, 2 पाटे, रोली, केशर घिसी हुई, कलम–दवात, नई बही।

पूजा गृहस्थाचार्य या कुटुम्ब के मुखिया को स्नान कर धोती दुपट्टा पहनना चाहिए।

विधि – पूजन में बैठे हुए सभी सज्जनों का निम्न मंत्र बोलकर तिलक करें।

मंगलं भगवान वीरो, मंगलं गौतमो गणी।
मंगलं कुन्दकुन्दाद्यो, जैन धर्मोऽस्तु मंगलं।।

इसके बाद निम्न मंत्र पढ़कर सभी जनों को शुद्धि के लिए थोड़े से जल के हल्के छींटें दें–

ॐ ह्रीं अमृत अमृतोद्भवे अमृतं वर्षणे, अमृतं स्रावय स्रावय सं सं
क्लीं क्लीं ब्लूं ब्लूं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय ठ: ठ: ह्रीं स्वाहा।

दीपक प्रज्ज्वलित करते हुए निम्न मंत्र उच्चारें –

ॐ ह्रीं अज्ञान तिमिरहरं दीपकं प्रज्ज्वलामि करोमि स्वाहा।

बही पर अंकित करें

श्री महावीर स्वामिने नम:

श्री लाभ   श्री शुभ

श्री
श्री श्री
श्री श्री श्री
श्री श्री श्री श्री
श्री श्री श्री श्री श्री
।। श्री ऋषभाय नम:।।
।। श्री महावीर स्वामिने नम:।।
।। श्री गौतम गणधराय नम:।।
।। श्री जिनमुखोद्भव सरस्वती देव्यै नम:।।
।। श्री केवलज्ञान लक्ष्मी देव्यै नम:।।

नगर मध्य .... शुभ मिति .... वार .... सं. ....

वीर निर्वाण सं. .... ता. .... माह ....

सन् .... लग्न ....नक्षत्र ....

शुभ बेला में नवीन मुहूर्त किया।

नाम दुकान ....।

मंगलाष्टक-स्तोत्र

(हिन्दी अनुवाद- मुनि श्री प्रणम्यसागर जी)

श्री मन्नम्र सुरा–सुरेन्द्र मुकुट – प्रद्योत – रत्नप्रभा ,
भास्वत् पाद–नखेन्दव: प्रवचनाम् भोधीन्दव: स्थायिन:।
ये सर्वे जिनसिद्ध–सूर्यनुगतास् ते पाठका: साधव: ,
स्तुत्या योगिजनैश्च पंच गुरव: कुर्वन्तु ते मंगलं।। 1।।

जिनके चरण कमल के नख सब, शशि सम उज्ज्वल चमक रहे,
देव असुर मुकुटों की मणियों, से शोभित हो विलस रहे।
वे अरिहन्त सिद्ध आचारज, पाठक मुनि अविकारी हो,
पंच परम परमेष्ठी प्रतिदिन, हमको मंगलकारी हो ।। 1 ।।

सम्यग्दर्शन–बोध–वृत्तममलं रत्नत्रयं पावनं,
मुक्ति–श्री–नगराधिनाथ–जिनपत् – युक्तोऽपवर्गप्रद:।
धर्म: सूक्ति–सुधा च चैत्यमखिलं चैत्यालयं श्रयालयं,
प्रोक्तं च त्रिविधं चतुर्विधममी कुर्वन्तु ते मंगलं।। 2।।

सम्यग्दर्शन ज्ञान चरण, निर्मल रत्नत्रय पावन है,
मोक्षप्रदायी यही धर्म है, मुक्तिपुरी का साधन है।
जिनआगम जिनप्रतिमा जिनवर, के आलय अघहारी हों,
पंच परम परमेष्ठी प्रतिदिन, हमको मंगलकारी हो ।। 2 ।।

नाभेयादिजिना: प्रशस्त–वदना: ख्याताश्चतुर्विंशति: ,
श्रीमन्तो भरतेश्वर–प्रभृतयो ये चक्रिणो द्वादश।

ये विष्णु–प्रतिविष्णु – लांगलधरा: सप्तोत्तरा विंशतिस् ,
त्रैकाल्ये प्रथि–तास्त्रि–षष्टि–पुरुषा: कुर्वन्तु ते मंगलं।। 3।।

ऋषभदेव से महावीर तक, तीर्थंकर चौबीस महा,
बारह चक्री नौ नारायण, प्रतिनारायण नवक रहा।
नौ बलभद्र जगत् विख्यात, पुरुष शलाका इन्हें कहो,
त्रेसठ ये सब महापुरुष भी, हमको मंगलकारी हो ।। 3 ।।

ये सर्वौषधि–ऋद्धय: सुतपसां, वृद्धिंगता: पंच ये ,
ये चाष्टांग महानिमित्त कुशलाश् चाष्टौ वियच्चारिण:।
पंच ज्ञानधरास् त्रयोऽपि बलिनो, ये बुद्धि ऋद्धीश्वरा: ,
सप्तैते सकलार्चिता मुनिवरा: कुर्वन्तु ते मंगलं।। 4।।

सर्वौषधि ऋद्धिधारी मुनि, तप ऋद्धि के भी धारक,
क्रिया–विक्रिया चारण ऋद्धि, बुद्धि ऋद्धि के भी साधक।
तप विशेष से बल ऋद्धि भी, रस ऋद्धि शिवकारी हो,
सप्त ऋद्धियों से शोभित मुनि, हमको मंगलकारी हो ।। 4 ।।

ज्योतिर्व्यन्तर भावनामरगृहे मेरौ कुलाद्रौ स्थिता: ,
जम्बू शाल्मलि–चैत्य–शाखिषु तथा वक्षार रूप्याद्रिषु।
इष्वाकार–गिरौ च कुण्डल–नगे द्वीपे च नंदीश्वरे ,
शैले ये मनुजोत्तरे जिन–गृहा: कुर्वन्तु ते मंगलं।। 5।।

ज्योतिष व्यन्तर भवनवासियों, वैमानिक आवासों में,
मेरु कुलाचल चैत्य वृक्ष, वृक्षारों रूप्याचल में।
इष्वाकार मानुषोत्तर हो, तेरह अठ गिरिधारी हो,
अकृत्रिम सब चैत्यालय भी, हमको मंगलकारी हो ।। 5।।

कैलाशे वृषभस्य निर्वृतिमही वीरस्य पावापुरे,
चम्पायां वसुपूज्य सज्जिनपतेः सम्मेदशैलेऽर्हताम्।
शेषाणामपि चोर्जयन्त शिखरे नेमीश्वर – स्यार्हतो,
निर्वाणावनयः प्रसिद्ध विभवाः कुर्वन्तु ते मंगलं।। 6।।

अष्टापद से ऋषभदेव जी, महावीर पावापुर से,
गिरनारी से नेमिप्रभु जी, वासुपूज्य चम्पापुर से।
शेष बीस तीर्थंकर श्रीजी, गिरि सम्मेद विहारी हो,
मोक्षभूमियाँ चौबीसों की, हमको मंगलकारी हो ।। 6 ।।

सर्पो हारलता भवत्यसिलता सत्पुष्प दामायते,
सम्पद्येत रसायनं विषमपि प्रीतिं विधत्ते रिपुः।
देवा यान्ति वशं प्रसन्न – मनसः, किं वा बहु ब्रूमहे,
धर्मादेव नभोऽपि वर्षति नगैः कुर्वन्तु ते मंगलं।। 7।।

सर्प हार बन जाये माला, असि विष अमृत बनता,
शत्रु मित्र सा प्रेमी बनता, देव स्वयं वश है होता।
बहुत कहें क्या रत्न वृष्टि भी, नभ से नित सुखकारी हो,
जैन धर्म का है प्रभाव वह, हमको मंगलकारी हो ।। 7 ।।

यो गर्भावतरोत्सवो भगवतां जन्माभिषेकोत्सवो,
यो जातः परिनिष्क्रमेण विभवो यः केवलज्ञानभाक्।
यः कैवल्यपुर – प्रवेश – महिमा सम्पादितः स्वर्गिभिः,
कल्याणानि च तानि पंच सततं कुर्वन्तु ते मंगलं।। 8।।

कल्याणक जो गर्भ समय पर, जन्म समय तीर्थंकर के,
दीक्षा ज्ञान महा कल्याणक, सुर नर पूजित पद जिनके।
देवों द्वारा मोक्ष समय की, पूजा विस्मयकारी हो,
पाँचों कल्याणक श्री जिन के, हमको मंगलकारी हो ।। 8 ।।

इत्थं श्री–जिन–मंगलाष्टकमिदं सौभाग्य–सम्पत्करं,
कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस् तीर्थंकराणामुषः।
ये शृण्वन्ति पठन्ति तैश्च सुजनै धर्मार्थ कामान्विता,
लक्ष्मीराश्रयते व्यपाय–रहिता निर्वाण लक्ष्मीरपि।। 9।।

इस प्रकार सौभाग्य प्रदायी, मंगल अष्टक जो पढ़ता,
कल्याणक पूजा विधान के, अवसर पर भी है पढ़ता।
अरु प्रभात में सुनता भी जो, धर्म अर्थ कामान्वित हो,
मोक्षपुरी को गमन करे वह, सबको मंगलकारी हो ।। 9 ।।

।। इति श्री मंगलाष्टक स्तोत्रं समाप्तम्।।

निर्ग्रन्थोनिरतात्मसौख्य–निलयो, मुक्त्यातुरस्तारकस्।
तीर्थोद्धारक! वीतकामकलहो, विज्ञोऽपि गोरक्षकः।।
सन्मार्गं हृदि शान्तितो नयति यो, भव्यांश्च मुक्तिश्रिये।
विद्यासागर पूज्यपाद कमलं, संस्थाप्य संपूजये।।

विधान प्रारम्भ करने हेतु मन्त्रोच्चार विधि

जल शुद्धि

ऊँ ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रौं ह्र: नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पद्म महापद्म तिगिंच्छ केसरि पुण्डरीक महापुण्डरीक गंगा सिन्धु रोहिद्रो–हितास्या हरिद्धरिकान्ता सीता सीतोदा नारी नरकान्ता सुवर्णकूला रूप्यकूला रक्ता रक्तोदा क्षीराम्भोनिधि शुद्ध जलं सुवर्ण घटं प्रक्षालित परिपूरितं नवरत्न गंधाक्षत पुष्पार्चित ममोदकं पवित्रं कुरु कुरु झं झं झौं झौं वं वं मं मं हं हं क्षं क्षं लं लं पं पं द्रां द्रां द्रीं द्रीं हं स: स्वाहा।

हस्त प्रक्षालन

ऊँ ह्रीं असुजर सुजर भव स्वाहा हस्त प्रक्षालनं करोमि।

अमृत स्नान

(अंजुली में जल लेकर शरीर पर छिड़के)

ऊँ ह्रीं अमृते अमृतोद्‌भवे अमृतवर्षिणि अमृतं स्रावय स्रावय सं सं क्लीं क्लीं ब्लूं ब्लूं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय सं हं क्ष्वीं क्ष्वीं हं स: स्वाहा।

तिलक मन्त्र

(नव तिलक करें) शिखा मस्तक ग्रीवा, हृदय, दोनों भुजायें, पीठ, कान, नाभि, हाथ

ऊँ ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रौं ह्र: अ सि आ उ सा नम: (मम/यजमानस्य) सर्वांगशुद्धि हेतव: नव तिलकं करोम्यहम्।

दिग्बन्धन

(पूर्व दिशा में सरसों/पुष्प का क्षेपण)

ऊँ ह्रां णमो अरिहंताणं ह्रां पूर्व दिशा समागतान् विघ्नान् निवारय निवारय मां एतान् सर्वान् रक्ष रक्ष स्वाहा।

(आग्नेय दिशा में सरसों/पुष्प का क्षेपण)

ऊँ ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं आग्नेय दिशा समागतान् विघ्नान् निवारय निवारय मां एतान् सर्वान् रक्ष रक्ष स्वाहा।

(दक्षिण दिशा में सरसों/पुष्प का क्षेपण)

ऊँ ह्रूँ णमो आइरियाणं ह्रूँ दक्षिण दिशा समागतान् विघ्नान् निवारय निवारय मां एतान् सर्वान् रक्ष रक्ष स्वाहा।

(नैऋत दिशा में सरसों/पुष्प का क्षेपण)

ऊँ ह्रौं णमो उवज्झायाणं ह्रौं नैऋत दिशा समागतान् विघ्नान् निवारय निवारय मां एतान् सर्वान् रक्ष रक्ष स्वाहा।

(पश्चिम दिशा में सरसों/पुष्प का क्षेपण)

ऊँ ह्र: णमो लोए सव्व साहूणं ह्र: पश्चिम दिशा समागतान् विघ्नान् निवारय निवारय मां एतान् सर्वान् रक्ष रक्ष स्वाहा।

(वायव्व दिशा में सरसों/पुष्प का क्षेपण)

ऊँ ह्रां णमो अरिहंताणं ह्रां वायव्व दिशा समागतान् विघ्नान् निवारय निवारय मां एतान् सर्वान् रक्ष रक्ष स्वाहा।

(उत्तर दिशा में सरसों/पुष्प का क्षेपण)

ऊँ ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं उत्तर दिशा समागतान् विघ्नान् निवारय निवारय मां एतान् सर्वान् रक्ष रक्ष स्वाहा।

(ऐशान दिशा में सरसों/पुष्प का क्षेपण)

ऊँ ह्रूँ णमो आइरियाणं ह्रूँ ऐशान दिशा समागतान् विघ्नान् निवारय निवारय मां एतान् सर्वान् रक्ष रक्ष स्वाहा।

(अधो–दिशा में सरसों/पुष्प का क्षेपण)

ऊँ ह्रौं णमो उवज्झायाणं ह्रौं अधो–दिशा दिशा समागतान् विघ्नान् निवारय निवारय मां एतान् सर्वान् रक्ष रक्ष स्वाहा।

(ऊर्ध्व–दिशा में सरसों/पुष्प का क्षेपण)

ऊँ ह्रः णमो लोए सव्व साहूणं ह्रः ऊर्ध्व–दिशा समागतान् विघ्नान् निवारय निवारय मां एतान् सर्वान् रक्ष रक्ष स्वाहा।

(सर्व–दिशा में सरसों/पुष्प का क्षेपण)

ऊँ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः णमो अरिहंताणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः सर्व– दिशा समागतान् विघ्नान् निवारय निवारय मां एतान् सर्वान् रक्ष रक्ष स्वाहा।

रक्षा सूत्र मन्त्र

(सभी पात्रों के दाहिने हाथ पर रक्षा सूत्र बांधे)

ऊँ नमोऽर्हते सर्वं रक्ष रक्ष ह्रूँ फट् स्वाहा।

रक्षा मन्त्र

(मंत्र पढ़कर सभी पात्रों पर सरसों/पुष्प का क्षेपण करें 3 बार) ऊँ ह्रूँ क्षूं फट् किरिटि किरिटि घातय घातय पर विघ्नान् स्फोटय स्फोटय सहस्त्र खण्डान् कुरु कुरु परमुद्रां छिन्द छिन्द परमन्त्रान् भिन्द भिन्द क्षां क्षः वाः वाः ह्रूँ फट् स्वाहा।

शान्ति मन्त्र

(मंत्र पढ़कर सभी पात्रों पर सरसों/पुष्प का क्षेपण करें 7 बार)

ऊँ नमोऽर्हते भगवते प्रक्षीणदोषाय दिव्यतेजो मूर्तये नमः श्री शान्तिनाथाय शान्तिकराय सर्वविघ्न प्रणाशनाय सर्वरोगापमृत्यु विनाशनाय सर्व परकृत क्षुद्रोपद्रव विनाशनाय सर्व क्षाम डामर विनाशनाय सर्वारिष्ट शान्ति कराय ऊँ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा नमः मां सर्व शान्तिं कुरु कुरु तुष्टिं पुष्टिं च कुरु कुरु स्वाहा।

पात्र अंग शुद्धि

(सभी पात्र जल से शुद्धि करें)

ऊँ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः नमोऽर्हते श्रीमते पवित्रतर जलेन पात्र शुद्धिं करोमि स्वाहा।

भूमि शुद्धि मन्त्र

(जल से भूमि शुद्धि करना)

ऊँ ह्रीं नमः सर्वज्ञाय सर्वलोकनाथाय धर्म तीर्थनाथाय श्री शान्तिनाथाय परम पवित्रेभ्यः शुद्धेभ्यः नमः पवित्र जलेन भूमि शुद्धिं करोमि स्वाहा।

रक्षा सूत्र मन्त्र

(दाहीने हाथ में रक्षा सूत्र बाँधना)

ऊँ नमोऽर्हते सर्वं रक्ष रक्ष ह्रूँ फट् स्वाहा।

मंगल कलश व अन्य कलशों में सुपारी आदि रखने का मन्त्र

(सभी कलशों में सुपारी हल्दी सरसों आदि रखें)

ऊँ ह्रीं अ सि आ उ सा नम: मंगल कलशे पुंगादि फलानि प्रभृति वस्तूनि प्रक्षिपामिति स्वाहा।

मंगल कलश व अन्य कलशों के ऊपर श्रीफल रखने का मन्त्र

(मंगल कलश पर श्रीफल रखें)

ऊँ क्षां क्षीं क्षूं क्षें क्षैं क्षों क्षौं क्ष: नमोऽहते भगवते श्रीमते सर्व रक्ष-रक्ष ह्रूँ फट् स्वाहा।

मंगल कलश स्थापना मन्त्र

(उत्तर पूर्व (ईशान) दिशा के कोने में मंगल कलश स्थापित करें)

ऊँ श्रीमत् अर्हत् परमेश्वरोपदिष्ट शिष्टेष्ट दयामूल धर्म प्रभावक यष्ट याजक प्रभृति भव्य जनानां सद्धर्ध श्री बलायु आरोग्य एश्वर्य अभिवृद्धि रस्तु। श्री मज्जिनशासने भगवतो महति महावीर वर्द्धमान तीर्थंकरस्य धर्म तीर्थे श्री मूलसंघे कुन्द कुन्दाम्नाये मध्यलोके जम्बूद्वीपे सुदर्शन मैरो र्दक्षिण भागे भरत क्षेत्रे आर्य खण्डे भारत देशे .... प्रदेशे .... नाम्नि नगरे विविध अलंकार मण्डित यज्ञ मण्डपे हुण्डाव-सर्पिणी काले दु:खं नाम्नि पंचम काल युगे प्रवर्त्तमाने................वीर निर्वाण संवत्सरे मासोत्तम मासे ....मासे .... पक्षे ....तिथौ .... वासरे जिन प्रतिमाया: सन्निधौ दिगम्बर जैनाचार्य शान्ति वीर शिव ज्ञान विद्यासागर परम्परायां मुनि आर्यिका श्रावक श्राविकादि चतुर्विध संघ सन्निधौ विधान निर्विघ्न समाप्त्यर्थं क्रिया शुद्धयर्थं शान्त्यर्थं पुण्याह-वाचनार्थं नवरत्न गंध पुष्पाक्षतादि बीजपूर शोभितम् शुद्ध प्रासुक जल परिपूरित मंगल कुम्भं मण्डपाग्रे स्वस्त्यै स्थापनं करोमि झं क्ष्वीं हं स: स्वाहा।

चारों कोनों पर कलश स्थापना का मन्त्र

(मांडना के चारों कोनों पर कलश स्थापना करें)

ऊँ आद्यानामाद्ये जम्बूद्वीपे मेरोर्दक्षिण भागे भरत क्षेत्रे आर्यखण्डे भारत देशे .... प्रदेशे .... नाम्नि नगरे .... दिगम्बर जिन मन्दिरे .... अवसरे .... वीर निर्वाण संवत्सरे मासानामुत्तमे मासे .... मासे .... पक्षे .... तिथौ .... वासरे .... विधान/पंचकल्याणक महोत्सव अवसरे .... कार्यस्य निर्विघ्न समाप्त्यर्थं, मण्डप भूमि शुद्धयर्थं, पात्र शुद्धयर्थं, शान्त्यर्थं पुण्याह-वाचनार्थं, नवरत्न गंध पुष्पाक्षतादि बीजपूरादि शोभितं श्री .... यजमानस्य हस्ताभ्यां चतु: कोणेषु चतु: कलश स्थापनम् करोम्यहम्। इवीं क्ष्वीं हं स: मंगलं भवतु स्वाहा। ऊँ ह्रीं स्वस्त्ये पुण्य कुम्भं स्थापयामि स्वाहा।

मंगल दीपक स्थापना का मन्त्र

(पूर्व दक्षिण दिशा में मंगल दीपक स्थापना करें)

रुचिर दीप्तिकरं शुभ दीपकं सकल लोक सुखाकर मुज्ज्वलम्।
तिमिर जालहरं प्रकरं सदा, किल धरामि सुमंगलकम् मुदा।।

ऊँ ह्रीं अज्ञान तिमिर हरं दीपकं स्थापयामिति स्वाहा।

विनायक यन्त्र स्थापना

मध्ये तेज: तत: स्याद् बलयमथधनु: संख्यकोष्ठेषु पंच,
पूज्यान्संस्थाप्य वृत्ते तत उपरितने, द्वादशाम्भोरुहाणि।
तत्र स्युर्मंगलान्युत्तुम शरण पदान्, पंच पूजयामरर्षीन, धर्म प्रख्याति भज: त्रिभुवनपतिना, वेष्ठयेदं कुशाद्दयम्।।

ऊँ ह्रीं स्नपन पीठे विनायक यन्त्रं स्थापयामि।

यन्त्राभिषेक मन्त्र

स्नात्वा शुभाम्बधरः कृतयत्नयोगात्

यन्त्रं निवेश्य शुचिपीठ वरेऽभिषिंचेत्।

ऊँ भूर्भुवः स्वरिह मंगल यन्त्र मेतत्

विघ्नौघ–वारक–महं परिषेचयामि।।

ऊँ भूर्भुवः स्वरिह विघ्नौघ–वारकं यन्त्रं वयं परिषिंचयामः।

–नियम–

आज के लिए सप्त व्यसन, रात्रि भोजन एवं अभक्ष्य का त्याग, ब्रह्मचर्य व अष्टमूलगुण का पालन।

अभिषेक विधि

(आचार्य श्री माघनन्दि जी कृत)

(हिन्दी अनुवाद – मुनि श्री प्रणम्यसागर जी)

श्रीमन्–नता–मर–शिरस्तट–रत्न–दीप्ति–

तोयाव–भासि–चरणाम्बुज–युग्म–मीशम्।

अर्हन्त–मुन्नत–पद–प्रद–माभि–नम्य,

तन्मूर्ति–षूद्य–दभिषेक–विधिं–करिष्ये।। 1।।

नित्य नम्र सुर सिर मुकुटों की, रत्न दीप्ति से दीपित हैं,

जिनके चरण कमल जल जैसे, तरल प्रकाशित पूजित हैं।

शिवपद दायी अरिहन्तों को, याद करूँ जिनरूप वरूँ,

उनकी ही जिन प्रतिमाओं का मंगल श्री अभिषेक करूँ।। 1।।

(प्रातःकालीन देव वन्दना में पूर्व आचार्यो के अनुक्रम से समस्त कर्मो के क्षय के लिए भाव पूजा, स्तवन, वन्दना सहित श्री पंच महागुरु भक्ति का मैं कायोत्सर्ग करता हूँ।)

(एक कायोत्सर्ग अर्थात् नौ बार णमोकार मंत्र का जाप करें।)

अभिषेक प्रतिज्ञा

याः कृत्रिमास् तदितराः प्रतिमा जिनस्य,

संस्नापयन्ति पुरुहूत–मुखा–दयस्ताः।

सद्भाव–लब्धि–समयादि–निमित्त योगात्,

तत्रैव–मुज्ज्वल–धिया कुसुमं क्षिपामि।। 2।।

जन्मोत्सवादि समयेषु यदीय कीर्ति,

सेन्द्राः सुराप्त मदवा रणगाः स्तुवन्ति।

तस्याग्रतो जिनपतेः परया विशुद्धया,

पुष्पाजंलिं मलय जात मुपाक्षिपेऽहम्।। 3।।

कृत्रिम अकृत्रिम जिन प्रतिमा, जिनवर की हैं जहाँ कहीं,

मुख्य इन्द्र से उनकी होती, नितप्रति ही अभिषेक विधि।

अहो परम सौभाग्य हमारा, काल लब्धि वश से आया,

पुष्पांजलि क्षेपण करने को, जिनवर निकट चला आया।। 2.3।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि।

श्रीकार लेखन

श्रीपीठ क्लृप्ते विशदाक्ष तौघैः, श्रीप्रस्तरे पूर्ण–शशांक–कल्पे।

श्रीवर्तके चन्द्र–मसीति वार्तां, सत्यापयन्तीं श्रियमा लिखामि।। 4।।

तीन जगत् में पावन पर्वत, जो सुमेरु हैं शाश्वत हैं,
उसके पाण्डुक वन में देखो, रखी शिला भी पाण्डुक है।
अक्षत सो वह शशि सम शोभे, जिनवर कारण श्रीयुत जो,
उस पर श्री लिखकर के मन में, करूँ प्रतिज्ञा विधि युत हो।। 4।।

ऊँ ह्रीं श्रीकार लेखनं करोमि।

पीठ स्थापना

कनकादि निभं कम्रं, पावनं पुण्य कारणम्।
स्थापयामि परं पीठं, जिन–स्नपनाय भक्तितः।। 5।।

स्वर्ण रजत उत्तम धातु का, जो पावन सिंहासन है,
अधर विराजे श्रीजिन फिर भी, नाम धरे सिंहासन है।
वीतराग सर्वज्ञ जिनेश्वर, थाप रहा उस आसन पे,
श्री जिनवर प्रतिमा जी को मैं, लाऊंगा सिर आसन पे।।5।।

ऊँ ह्रीं श्रीपीठ स्थापनं करोमि।

अभिषेक हेतु प्रतिमा स्थापना

भृंगार–चामर–सुदर्पण–पीठ–कुम्भ,
ताल–ध्वजा–तप–निवारक–भूषिताग्रे।
वर्धस्व–नन्द जय–पाठ पदा–वलीभिः,
सिंहासने जिन भवन्त–महं श्रयामि।
वृषभादि सुवीरान्तान् जन्मातौ जिष्णु चर्चितान्।
स्थापयाम्य–भिषेकाय भक्त्या पीठे महोत्सवम्।। 6।।

चामर दर्पण आसन कलशा, झारी मंगल द्रव्य रहे,
ध्वजा वीजना तथा छत्र भी, आसन आगे शोभ रहे।
जयवन्तों जिनदेव सदा ही, जय–जयकार करो उर धार।
सिंहासन पर आप पधारो, पाप कर्म का कम हो भार।। 6।।

ऊँ ह्रीं श्री धर्म तीर्थादिनाथ भगवन्निह पाण्डुक शिला पीठे सिंहासने तिष्ठ तिष्ठ।

कलश स्थापना

श्रीतीर्थ कृत्स्न–पन–वर्य, विधौ सुरेन्द्रः,
क्षीराब्धि–वारिभि–रपूरय–दुद्घ कुम्भान्।
याँस्ता–दृशा–निव विभाव्य यथा र्हणीयान् ,
संस्थापये कुसुम–चन्दन–भूषि–ताग्रान्।। 7।।

शात कुम्भीय कुम्भौघान्, क्षीराब्धेस् तोय पूरितान्।
स्थापयामि जिन स्नान, चन्दनादि सु चर्चितान्।। 8।।

श्री जिन के जन्माभिषेक की, विधि हुई जो देवों से,
वैसी ही प्रतिमाभिषेक विधि, वैभव भक्ति भावों से।
स्वर्ण कलश में क्षीरोदधि का, प्रासुक जल लेकर आया,
चन्दन केसर कुसुम विभूषित, चार कलश में भर लाया।।7.8।।

ऊँ ह्रीं अर्हं चतुः कोणेषु चतुः कलश स्थापनं करोमि।

अर्घ्य

आनन्द–निर्भर–सुर–प्रमदादि–गानै,
र्वादित्र–पूर–जय–शब्द–कल–प्रशस्तैः।।

उद्गीय–मान–जगतीपति कीर्ति मेनां,
पीठस्थलीं वसु–विधार्चन–योल्लसामि।। 9।।

आनन्दित हो सुर खचरी भी वनिता करतीं मंगलगान,
वादित्रों जय–जय तालों से, सब करते जिनवर सम्मान।
पुण्यफला अरिहन्ता की यह, पुण्य कीर्ति का महाप्रभाव,
वसु–विधि अर्घ्य समर्पित जिनवर, बना रहे पूजन का भाव।। 9।।

ऊँ ह्रीं स्नपनपीठ स्थिताय जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अभिषेक

कर्म–प्रबन्ध–निगडै–रपि हीन–ताप्तं,
ज्ञात्वापि भक्ति–वशत: परमादि–देवम्।
त्वां स्वीय–कल्मष–गणोन्मथ–नाय देव।
शुद्धोदकै–रभि–नयामि महा–भिषेकम्।। 10।।

कर्म बन्ध से रहित आप हो, परम शुद्ध बाहर भीतर,
जान रहा हूँ फिर भी प्रभुवर, भक्ति भाव से होकर तर।
अपने मन का कालुष धोने, आप्त देव का न्हवन करूँ,
भाव शुद्धि से शुद्ध उदक से, निज–उर जिनवर छवि धरूँ।। 10।।

ऊँ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं हं सं सं तं तं पं पं वं वं हं हं सं सं तं तं पं पं झं झं क्ष्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पवित्र–तर–जलेन जिन–मभिषेच–यामीति स्वाहा।

तीर्थोत्तम भवै र्नीरैः, क्षीर वारिधि रूपकैः।
स्नपयामि सुजन्माप्तान् , जिनान् सर्वार्थ सिद्धि दान्।। 11।।

ऊँ ह्रीं श्रीं वृषभादि वीरान्तान् जलेन स्नपयामीति स्वाहा।

बृहद् शान्तिधारा

ऊँ नमः सिद्धेभ्यः, ऊँ नमः सिद्धेभ्यः, ऊँ नमः सिद्धेभ्यः, श्री वीतरागाय नमः श्री जिनशासनाय नमः श्री अनेकान्त धर्माय नमः। अरिहंता मंगलं भवतु सिद्धा मंगलं भवतु साहु मंगलं भवतु आर्हतधर्मो मंगलं भवतु।

ऊँ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते श्री(मंदिर के मूलनायक भगवान का नाम) ऋषभनाथ तीर्थंकराय समवशरण शोभिताय, द्वादशगण–परिवेष्टिताय, परमौदारिक शरीर पवित्राय, अनन्त चतुष्टय सहिताय, शुद्धज्ञान चेतनाय, ऋषि–आर्यिका–श्रावक–श्राविका प्रमुख चतुः संघोपसर्ग हराय श्री शान्तिनाथाय घातिकर्म रहिताय, अघातिकर्म रहिताय, अपवादभयं अपहर–अपहर, अकालमृत्युं अपहर–अपहर,अतिकामं अपहर–अहपर, क्रोधादिकषायं अपहर–अपहर अग्निवायुभयं अपहर–अपहर, देवमनुष्य तिर्यक् कृतोपसर्गं अपहर–अपहर, प्रकृतिकोपसर्गं अपहर–अपहर, सर्वदुष्ट भयं अपहर–अपहर, सर्वक्रूर रोगं अपहर–अपहर, सर्वशूल रोगं अपहर–अपहर, सर्व कुष्ठरोगं अपहर–अपहर, सर्वपशुरोगं अपहर–अपहर, सर्ववृक्षपुष्परोगं अपहर–अपहर, भूकम्पभयं अपहर–अपहर, अतिवृष्टिभयं अपहर–अपहर, अनावृष्टिभयं अपहर–अपहर, सर्वदुर्भिक्षभयं अपहर–अपहर, सर्वोदरमस्तक व्याधिं अपहर–अपहर, सर्वांगव्याधिं अपहर–अपहर, व्यन्तरादिबाधां अपहर–अपहर, सर्वसाता वेदनीयं अपहर–अपहर, सर्वकर्मरोग अपहर–अपहर।

हे पार्श्व–तीर्थं नाथ। सर्वेषां (शान्तिधाराकर्ता का नाम) शान्तिं कुरु कुरु, सर्वजनानानन्दनं कुरु कुरु, सर्व भव्यानन्दनं कुरु करु, सर्व गोकुलानन्दनं कुरु कुरु, सर्व लोकानन्दनं कुरु करु। श्री वर्धमान भगवन् ! सर्वेषांस्वस्तिरस्तु, कल्याणमस्तु, जयोस्तु, दीर्घायुरस्तु, वीरवंशवृद्धिरस्तु, ऐश्वर्याभिवृद्धिरस्तु।

ॐ ह्रीं श्री सिद्ध परमेष्ठिने श्रीऋषभ–अजित–चन्द्रप्रभ–वासुपूज्य–शांतिनाथ–मुनिसुव्रतनाथ–नेमिनाथ–पार्श्वनाथ –वर्धमानस्वामिने चतु:षष्टिऋद्धि समन्वितमुनये अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय–साधु–जिनधर्म–जिनागम–जिनचैत्य जिनचैत्यालय नवदेवताभ्यो नम:।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं असि आ उसा अनाहत विद्यायै णमो अरहंताणं ह्रौं सर्व विघ्नं शान्तिं जिनशासन प्रभावनां कुरु–कुरु स्वाहा।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं असि आ उसा अनाहत विद्यायै णमो अरहंताणं ह्रौं सर्व विघ्नं शान्तिं जिनशासन प्रभावनां कुरु–कुरु स्वाहा।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं असि आ उसा अनाहत विद्यायै णमो अरहंताणं ह्रौं सर्व विघ्नं शान्तिं जिनशासन प्रभावनां कुरु–कुरु स्वाहा।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं असि आ उसा अनाहत विद्यायै णमो अरहंताणं ह्रौं सर्व विघ्नं शान्तिं जिनशासन प्रभावनां कुरु–कुरु स्वाहा।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं असि आ उसा अनाहत विद्यायै णमो अरहंताणं ह्रौं सर्व विघ्नं शान्तिं जिनशासन प्रभावनां कुरु–कुरु स्वाहा।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं असि आ उसा अनाहत विद्यायै णमो अरहंताणं ह्रौं सर्व विघ्नं शान्तिं जिनशासन प्रभावनां कुरु–कुरु स्वाहा।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं असि आ उसा अनाहत विद्यायै णमो अरहंताणं ह्रौं सर्व विघ्नं शान्तिं जिनशासन प्रभावनां कुरु–कुरु स्वाहा।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं असि आ उसा अनाहत विद्यायै णमो अरहंताणं ह्रौं सर्व विघ्नं शान्तिं जिनशासन प्रभावनां कुरु–कुरु स्वाहा।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं असि आ उसा अनाहत विद्यायै णमो अरहंताणं ह्रौं सर्व विघ्नं शान्तिं जिनशासन प्रभावनां कुरु–कुरु स्वाहा।

सम्पूजकानां प्रति–पालकानां, यतीन्द्र सामान्य तपो धनानाम्।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्यराज्ञ:, करोतु शान्तिं भगवान् जिनेन्द्र:।।

–**––

अभिषेक पश्चात् अर्घ्य

पानीय–चन्दन–सदक्षत–पुष्प–पुंज,
नैवेद्य–दीपक–सुधूप–फल–ब्रजेन।
कर्माष्टक–क्रथन–वीर–मनन्त–शक्तिं,
सम्पूजयामि महसा महसां निधानम्।। 12।।

जल चन्दन अक्षत पुष्पों का, चरुवर दीप धूप फल ले,
आठों का इक अर्घ्य बनाकर, जिनवर सम्मुख कर–कर ले।
अष्ट कर्म से रहित बनूँ मैं, और बनूँ तुम सम भगवान्,
यही भाव से अर्घ्य चढ़ाता, शीघ्र मिले जिनगुण की खान।। 12।।

ॐ ह्रीं अभिषेकान्ते वृषभादि महावीरान्तेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनबिम्ब परिमार्जन

हे तीर्थपा निज यशो धवली कृताशा:,
सिद्धौष धाश्च भव–दु:ख महा–गदानाम्।
सद् भव्य हृज्जनित पंक कबन्ध कल्पा,
यूयं जिना: सतत शान्तिकरा भवन्तु ।।13।।

नत्वा मुहु–र्निज–करै–रमृतोप–मेयैः ,
स्वच्छै–र्जिनेन्द्र तव चन्द्र करा वदातैः।
शुद्धां–शुकेन विमलेन नितान्त–रम्ये,
देहे स्थितान् जल–कणान् परिमार्जयामि।। 14।।

दोहा

जिन बिम्बों का वस्त्र से, परिमार्जन आनन्द।
कौन कह सके धरा पर, कितना पुण्य प्रबन्ध।।
जिन प्रतिमा जिन सारखी, करो नित्य तुम ध्यान,
हुआ होएगा इसी से, आतम का कल्याण।। 13.14।।

ऊँ ह्रीं अमलां शुकेन जिन–बिम्बं परिमार्जनं करोमि।

अभिषेक स्तुति

हमने प्रभुजी के चरण पखारे।। टेक ।।

जनम जनम के संचित पातक, तत्क्षण ही निरवारे।। हमने.....
प्रासुक जल के कलश श्रीजिन, प्रतिमा ऊपर ढारे।। हमने.....
वीतराग अरहंत देव के, गूँजे जय जयकारे।। हमने.....
चरणाम्बुज स्पर्श करत ही, छाये हर्ष अपारे।। हमने.....
पावन तन मन नयन भये सब, दूर भये अँधियारे।। हमने.....

पुनः जिनबिम्ब यथास्थान विराजमान करना

स्नानं विधाय भवतोऽष्ट, सहस्र नाम्ना–
मुच्चारणेन मनसो वचसो विशुद्धिम्।
जिघृक्षु–रिष्टि–मिन तेऽष्ट तयीं विधातुं,
सिंहासने विधि वदत्र निवेशयामि।। 15।।

धन्य हुआ मैं आज जिनेश्वर, करके पावन श्री अभिषेक,
एक हजार आठ नामों से, उच्चारण करता सविशेष।
मन वच तन की शुद्धि संभाले, अठ विधि पूजा करने आज,
सिंहासन पर पुनः आपको, संस्थापित करता जिनराज।। 15।।

ऊँ ह्रीं श्री सिंहासन पीठे जिन–बिम्बं स्थापयामि।

जिनबिम्ब स्थापना का अर्घ्य

जल गंधाक्षतैः पुष्पैश, चरु दीप सु धूपकैः।
फलै र्धै र्जिन मर्चेज्, जन्म दुःखा पहानये।। 16।।

दोहा

जल चन्दन अक्षत तथा पुष्प चरु औ दीप।
धूप फलों के अर्घ्य से, जिन चरणों के समीप ।। 16।।

ऊँ ह्रीं श्री पीठ स्थित जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन गन्धोदक धारण करना

नत्वा परीत्य निज नेत्र ललाट योश्च।
व्यातु क्षणेन हरता, दघ संचयं मे ।।
शुद्धोदकं जिनपते तव पाद योगाद्।
भूयाद् भवा तपहरं, घृत मादरेण ।। 17।।

मुक्ति श्री वनिता करोदक मिदं, पुण्याङ् कुरोत्पादकं।
नागेन्द्र त्रिदशेन्द्र चक्र पदवी, राज्याभिषे कोदकम्।।
सम्यग्ज्ञान चरित्र दर्शन लता, संवृद्धि सम्पादकं।
कीर्ति श्री जय साधकं तव जिन, स्नानस्य गन्धोदकम्।। 18।।

दोहा

अति सुगन्धित जिन देह से, संस्पर्शित जल जान।

जिन गंधोदक सिर धरूँ, धन्य बना दिन–मान।। 17.18।।

ऊँ ह्रीं श्री जिन गन्धोदकं स्व नेत्र ललाटे धारयामि।

इमे नेत्रे जाते, सुकृत जल सिक्ते सफलिते।
ममेदं मानुष्यं, कृति जनगणा देयम भवत्।।
मदीयाद् भल्लाटा दशुभतर कर्माटन मभूत्।
सदेदृक् पुण्याह र्मम, भवतु ते पूजन विधौ।। 19।।
पुष्पांजलिं क्षिपामि।

--**--

(नित्य नियम पूजन प्रारम्भ)

विनय पाठ

(तर्ज– मेरे सर पर रख दो गुरुवर, अपने ये दोनों हाथ....)

इह विधि ठाड़ो होय के, प्रथम पढ़े जो पाठ।
धन्य जिनेश्वर देव तुम, नाशे कर्म जु आठ।। 1।।
अनन्त चतुष्टय के धनी, तुम ही हो सिरताज।
मुक्तिवधु के कंत तुम, तीन भुवन के राज।। 2।।
तिहुँ जग की पीड़ा हरन, भवदधि शोषणहार।
ज्ञायक हो तुम विश्व के, शिवसुख के करतार।। 3।।
हरता अघ अंधियार के, करता धर्म–प्रकाश।
थिरता–पद दातार हो, धरता निजगुण रास।। 4।।

धर्मामृत उर जलधि सों, ज्ञानभानु तुम रूप।
तुमरे चरण–सरोज को, नावत तिहुँ–जग–भूप।। 5।।
मैं वन्दौं जिनदेव को, कर अति निर्मल भाव।
कर्म–बन्ध के छेदने, और न कछु उपाव।। 6।।
भविजन को भव–कूप तैं, तुम ही काढ़नहार।
दीन–दयाल अनाथपति, आतम गुण भण्डार।। 7।।
चिदानन्द निर्मल कियो, धोय कर्म–रज मैल।
सरल करी या जगत में, भविजन को शिव–गैल।। 8।।
तुम पद–पंकज पूजतैं , विघ्न–रोग टर जाय।
शत्रु मित्रता को धरैं, विष निरविषता थाय।। 9।।
चक्री खगधर इन्द्र पद, मिलैं आपतैं आप।
अनुक्रम करि शिवपद लहैं, नेम सकल हनि पाप।। 10।।
तुम बिन मैं व्याकुल भयो, जैसे जलबिन मीन।
जन्म जरा मेरी हरो, करो मोहि स्वाधीन।। 11।।
पतित बहुत पावन किये, गिनती कौन करेव।
अंजन से तारे कुधी, जय जय जय जिनदेव।। 12।।
थकी नाव भवदधि विषैं, तुम प्रभु पार करेय।
खेवटिया तुम हो प्रभु, जय जय जय जिनदेव।। 13।।
राग सहित जग में रूल्यो, मिले सरागी देव।
वीतराग भेंट्यो अबैं, मेटो राग कुटेव।। 14।।
कित निगोद कित नारकी, कित तिर्यंच अज्ञान।
आज धन्य मानुष भयो, पायो जिनवर थान।। 15।।
तुमको पूजैं सुरपति, अहिपति नरपति देव।
धन्य भाग्य मेरो भयो, करन लग्यो तुम सेव।। 16।।
अशरण के तुम शरण हो , निराधार आधार।
मैं डूबत भव सिन्धु में, खेव लगाओ पार।। 17।।

इन्द्रादिक गणपति थके, कर विनती भगवान्।
अपनो विरद निहारिकैं, कीजे आप समान।।18।।
तुम्हरी नेक सुदृष्टि तैं, जग उतरत है पार ।
हा हा डूब्यो जात हों, नेक निहार निकार।। 19।।
जो मैं कहहूँ और सो, तो न मिटैं उरझार।
मेरी तो तोसों बनी, यातैं करौं पुकार।। 20।।
वन्दों पाँचों परमगुरु, सुरगुरु वंदत जास।
विघनहरन मंगलकरन, पूरन परम प्रकाश।। 21।।
चौबीसों जिनपद नमों, नमों शारदा माय।
शिवमग साधक साधु नमि, रच्यों पाठ सुखदाय।। 22।।

मंगल पाठ

मंगल मूर्ति परम पद, पंच धरो नित ध्यान।
हरो अमंगल विश्व का, मंगलमय भगवान्।। 23।।
मंगल जिनवर पद नमों, मंगल अरहंत देव।
मंगलकारी सिद्धपद, सो वन्दों स्वयमेव।। 24।।
मंगल आचारज मुनि, मंगल गुरु उवझाय।
सर्व साधु मंगल करो, वन्दों मन-वच-काय।। 25।।
मंगल सरस्वती मात का, मंगल जिनवर धर्म।
मंगलमय मंगलकरण, हरो असाता कर्म।। 26।।
या विधि मंगल करनतें, जग में मंगल होत।
मंगल 'नाथूराम' यह, भवसागर दृढ़ पोत।। 27।।

अथ् पौर्वाह्निक (मध्याह्निक-आपराह्निक) देव वन्दनायां पूर्वाचार्या - नुक्रमेण सकल कर्म-क्षयार्थं, भावपूजा वन्दनास्तव, समेतं श्री पंच महागुरु भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् । तावकायं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि।

(नौ बार णमोकार मंत्र का जाप करें एवं आकुलता न करें)

पूजा पीठिका

ॐ जय जय जय। नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु। णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं।।
ॐ ह्रीं अनादि मूल मन्त्रेभ्यो नमः। (पुष्पांजलिं क्षिपामि)

मंगल, उत्तम, शरण पाठ

चत्तारि मंगलं, अरिहन्त मंगलं, सिद्ध मंगलं, साहू मंगलं, केवलि पण्णत्तो धम्मो मंगलं।
चत्तारि लोगुत्तमा, अरिहन्त लोगुत्तमा, सिद्ध लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलि पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा।
चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरिहन्त सरणं पव्वज्जामि, सिद्ध सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलि पण्णत्तो धम्मं सरणं पव्वज्जामि।
ॐ नमोऽर्हते स्वाहा । (पुष्पांजलिं क्षिपामि)

अपवित्रः पवित्रो वा, सुस्थितो दुःस्थितोऽपि वा।
ध्यायेत्पंच-नमस्कारं, सर्व-पापैः प्रमुच्यते।। 1।।
अपवित्रः पवित्रो वा, सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत्परमात्मानं, स बाह्याभ्यन्तरे शुचिः।। 2।।
अपराजित-मन्त्रोऽयं सर्व-विघ्न विनाशनः।
मंगलेषु च सर्वेषु , प्रथमं मंगलं मतः।। 3।।
एसो पंच णमोयारो, सव्व-पावप्प-णासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवई मंगलम्।। 4।।
अर्हं-मित्यक्षरं ब्रह्म, वाचकं परमेष्ठिनः।
सिद्ध चक्रस्य सद्बीजं, सर्वतः प्रणमाम्यहं।। 5।।
कर्माष्टक-विनिर्मुक्तं, मोक्ष लक्ष्मी निकेतनं।
सम्यक्त्वादि गुणोपेतं, सिद्धचक्रम् नमाम्यहं।। 6।।

विघ्नौघा: प्रलयं यान्ति, शाकिनी–भूत–पन्नगा:।
विषं निर्विषतां याति, स्तूयमाने जिनेश्वरे।। 7।।
(पुष्पांजलिं क्षिपामि)

पंचकल्याणक अर्घ्य

उदक चंदन तंदुल पुष्पकैश्, चरु सुदीप सुधूप फलार्घ्य कै:।
धवल मंगल गान रवाकुले, जिन गृहे जिन कल्याणक महं यजे।।

ऊँ ह्रीं श्री भगवतो गर्भ जन्म तप ज्ञान निर्वाण पंचकल्याणकेभ्यो अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचपरमेष्ठी अर्घ्य

उदक चंदन तंदुल पुष्पकैश्, चरु सुदीप सुधूप फलार्घ्य कै:।
धवल मंगल गान रवाकुले, जिनगृहे जिन इष्ट(नाथ) महं यजे।।

ऊँ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनसहस्रनाम अर्घ्य

उदक चंदन तंदुल पुष्पकैश्, चरु सुदीप सुधूप फलार्घ्य कै:।
धवल मंगल गान रवाकुले, जिनगृहे जिननाम महं यजे।।

ऊँ ह्रीं श्री भगवज्जिन अष्टोत्तर सहस्र नामेभ्यो अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तत्त्वार्थसूत्र जी अर्घ्य

उदक चंदन तंदुल पुष्पकैश्, चरु सुदीप सुधूप फलार्घ्य कै:।
धवल मंगल गान रवाकुले, जिनगृहे जिनसूत्र महं यजे।।

ऊँ ह्रीं श्री उमास्वामी जी कृत तत्त्वार्थ सूत्रेभ्यो अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समस्त स्तोत्र अर्घ्य

उदक चंदन तंदुल पुष्पकैश्, चरु सुदीप सुधूप फलार्घ्य कै:।
धवल मंगल गान रवाकुले, जिनगृहे जिनस्तोत्र महं यजे।।

ऊँ ह्रीं श्री कल्याण मंदिर स्तोत्र, भक्तामर स्तोत्र, वर्धमान स्तोत्र एवं समस्त जिनस्तोत्रं अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूजा प्रतिज्ञा पाठ

(तर्ज– भक्तामर स्तोत्र ....)

श्रीमज्जिनेन्द्र–मभिवंद्य जगत्–त्रयेशं,
स्याद्वाद्–नायक–मनन्त–चतुष्ट–यार्हम्।
श्री मूलसंघ सुदृशां सुकृतैक हेतु: ,
जैनेन्द्र यज्ञ विधिरेष मयाऽभ्यधायि।। 1।।
(आगे प्रत्येक स्वस्ति उच्चारण के साथ पुष्प क्षेपण करें)
स्वस्ति त्रिलोक–गुरवे जिन–पुंगवाय,
स्वस्ति स्वभाव–महिमोदय–सुस्थिताय।
स्वस्ति प्रकाश सहजोर्ज्जित–दृङ्मयाय,
स्वस्ति प्रसन्न–ललिताद्–भुत–वैभवाय।। 2।।
स्वस्त्युच् छल–द्विमल–बोध–सुधा–प्लवाय,
स्वस्ति स्वभाव–परभाव–विभासकाय।
स्वस्ति त्रिलोक–विततैक–चिदुद् गमाय,
स्वस्ति त्रिकाल–सकलायत–विस्तृताय।। 3।।
द्रव्यस्य शुद्धि–मधिगम्य–यथानुरूपं,
भावस्य शुद्धि–मधिकामधि–गंतुकाम:।

आलंबनानि विविधान्य–वलम्ब्य वल्गन्,
भूतार्थ–यज्ञ–पुरुषस्य करोमि यज्ञम्।। 4।।
अर्हत्पुराण–पुरुषोत्तम–पावनानि,
वस्तून् यनून मखिलान्य यमेक एव।
अस्मिञ्ज्वलद् विमल–केवल–बोध–वह्नौ,
पुण्यं समग्र मह मेक मना जुहोमि।। 5।।
ऊँ ह्रीं विधियज्ञ प्रतिज्ञानाय जिन प्रतिमाग्रे परिपुष्पांजलिं क्षिपामि।

स्वस्ति मंगल–पाठ

(आगे प्रत्येक स्वस्ति उच्चारण के साथ पुष्प क्षेपण करें)
श्रीवृषभो नः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअजितः।
श्रीसम्भवः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअभिनन्दनः।
श्रीसुमतिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीपद्मप्रभः।
श्रीसुपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीचन्द्रप्रभः।
श्रीपुष्पदन्तः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशीतलः।
श्रीश्रेयान् स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवासुपूज्यः।
श्रीविमलः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअनन्तः।
श्रीधर्मः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशान्तिः।
श्रीकुन्थुः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअरनाथः।
श्रीमल्लिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीमुनिसुव्रतः।
श्रीनमिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीनेमिनाथः।
श्रीपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवर्द्धमानः।
।। पुष्पांजलिं क्षिपामि ।।

परमर्षि स्वस्ति मंगल–पाठ

(आगे प्रत्येक स्वस्ति उच्चारण के साथ पुष्प क्षेपण करें)
नित्या–प्रकंपाद्–भुत केवलौघाः, स्फुरन्मनः पर्यय शुद्ध बोधाः।
दिव्यावधिज्ञान बल प्रबोधाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।। 1।।
कोष्ठस्थ धान्योप–ममेक बीजं, संभिन्न संश्रोतृ पदानुसारि।
चतुर्विधं बुद्धिबलं दधानाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।। 2।।
संस्पर्शनं संश्रवणं च दूरा, दास्वाद–नघ्राण विलोकनानि।
दिव्यान् मतिज्ञान बलाद्व हन्तः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।। 3।।
प्रज्ञा प्रधानाः श्रमणाः समृद्धाः, प्रत्येक बुद्धाः दशसर्व पूर्वैः।
प्रवादिनोऽष्टांग निमित्त विज्ञाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।। 4।।
जंघानल श्रेणी फलांबु तंतु, प्रसून बीजांकुर चार णाह्वाः।
नभोंऽगण स्वैर विहारिणश्च, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।। 5।।
अणिम्नि दक्षा कुशला महिम्नि, लघिम्नि शक्ताः द्व्रतिनो गरिम्णि।
मनो वपु र्वाग्बलिनश्च नित्यं, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।। 6।।
सकाम रूपित्व वशित्व मैश्यं, प्राकाम्य मन्तर्द्धि मथाप्तिमाप्ताः।
तथाऽप्रतीघात गुण प्रधानाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।। 7।।
दीप्तं च तप्तं च तथा महोग्रं, घोरं तपो घोर परा क्रमस्थाः।
ब्रह्मा परं घोर गुणाश्च चरंतः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।। 8।।
आमर्ष सर्वौषधयस् तथाशी,र्विषा विषा दृष्टि विषा विषाश्च।
सखिल्ल विड्जल्ल मलौषधीशाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।। 9।।
क्षीरं स्त्रवंतोऽत्र घृतं स्त्रवंतो, मधु स्त्रवंतो ऽप्य मृतं स्त्रवंतः।
अक्षीण संवास महान साश्च, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।। 10।।

।। इति परमर्षि स्वस्ति मंगल विधानं परिपुष्पांजलिं क्षिपामि।।

विधान मण्डल

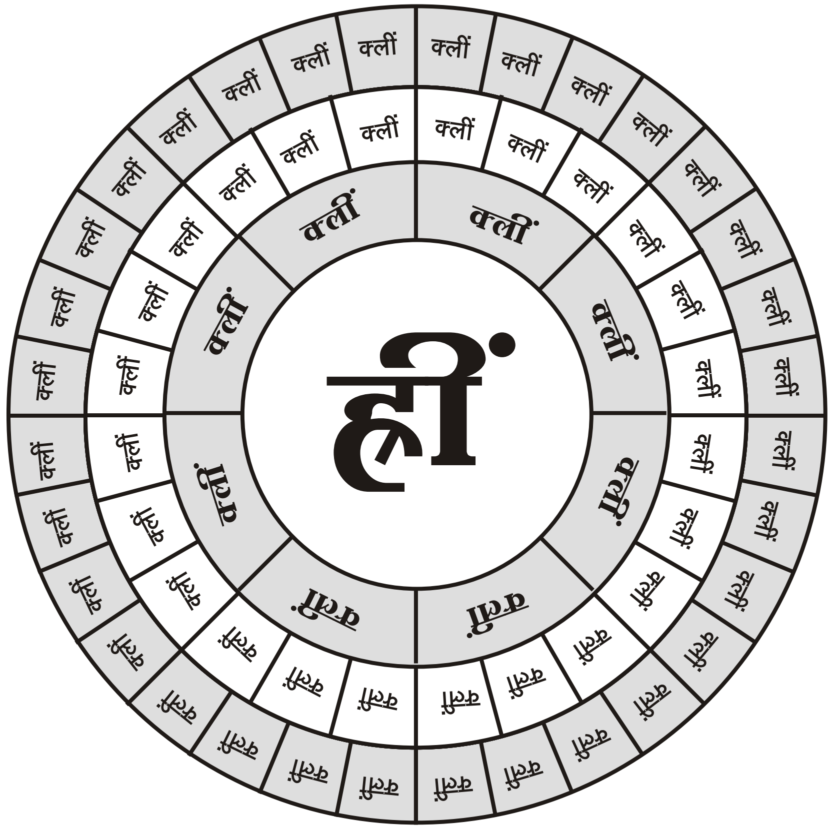

श्री वर्धमान जिन पूजन

(मुनिश्री प्रणम्यसागर विरचित)

स्थापना

हे प्रभु तेरे चरण कमल की, पूजा करने मैं आया
संस्थापित करके निज चित में आज बहुत मैं हर्षाया।
आह्वानन करता हूँ स्वामिन् अन्तिम तीर्थंकर महावीर
तिष्ठ–तिष्ठ मम हृदय विराजो सन्मति वर्धमान अतिवीर।

ॐ ह्रीं श्री वीरसन्मति वर्धमानातिवीर महावीर पंचनामधेय! वर्धमान जिन अत्र ..

जल तो तन की शुद्धि करता तन की तृषा मिटाता है
भक्ति का जल बहे हृदय तो मन की शान्ति बढ़ाता है।
हो विशुद्ध मेरा मन भगवन मन की तृष्णा शान्त करो
यह विशुद्ध प्रासुक जल निर्मल अर्पित करता ताप हरो।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीं वीरसन्मति वर्धमानातिवीर महावीर पंचनामधेयाय वर्धमान जिनेन्द्राय..

बाह्य वस्तु को देख जगत में उसको पाने की इच्छा
मन का लोभ बढ़ाती प्रतिपल आज मिली सम्यक् शिक्षा।
लोभ कषाय मिटाने भगवन मन शीतलता पा जाने
चरणन चन्दन ले कर आया तव पद रज शीतल पाने ।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीं वीरसन्मति वर्धमानातिवीर महावीर पंचनामधेयाय वर्धमान जिनेन्द्राय..

खण्ड–खण्ड है ज्ञान हमारा ज्ञेयों के आकर्षण से
कर्म आवरण मैला करता राग–द्वेष स्पर्शन से।

अक्षत सम है धवल अखण्डित मेरा ज्ञान स्वभाव घना
अत: आपके चरणन अर्पित अक्षत करने भाव बना।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीं वीरसन्मति वर्धमानातिवीर महावीर पंचनामधेयाय वर्धमान जिनेन्द्राय..

विविध–विविध पुष्पों के रसमय इत्र सुगन्ध लगाये हैं
नासा से मन सूंघ–सूंघकर काम विभाव बढ़ाये हैं।
इसी वासना के कारण से देख सका ना तेरा रूप
पुष्प सुगन्धित अर्पित करता मुझे दिखे मम आत्म स्वरूप।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीं वीरसन्मति वर्धमानातिवीर महावीर पंचनामधेयाय वर्धमान जिनेन्द्राय..

रसना इन्द्रिय की लोलुपता जड़ में राग बढ़ाती है
मिष्ट इष्ट व्यंजन अति खाकर तन का ममत जगाती है।
मैं चेतन होकर भी भगवन् करता जड़ से राग रहा
चारु–चारु चरु चरण चढ़ाकर चेतन अब कुछ जाग रहा।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीं वीरसन्मति वर्धमानातिवीर महावीर पंचनामधेयाय वर्धमान जिनेन्द्राय..

तनघट पनघट गृहघट घट–घट भटक–भटक मैंने देखा
सरपट–सरपट दौड़–दौड़ कर चमक जगत विद्युत रेखा।
दौड़ मिटे अज्ञानमयी यह निज घट दीपक ज्योति जले
तब चरणन जड़ दीपक बाती केवल ज्योति प्रकाश मिले।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीं वीरसन्मति वर्धमानातिवीर महावीर पंचनामधेयाय वर्धमान जिनेन्द्राय..

कभी जला है कभी गला है रोंदा कूटा कटा मिटा
इन अनन्त जन्मों में भगवन् तन संग आतम खूब पिटा।
राग द्वेष से कर्मबन्ध फिर कर्म फलों से देह मिली
अष्ट कर्म के बन्ध जलाने धूप चढ़ाता बोधि मिली।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीं वीरसन्मति वर्धमानातिवीर महावीर पंचनामधेयाय वर्धमान जिनेन्द्राय..

यह हो जाय वह हो जाये अगणित जन्मों में पहले
इसी कामना से चरणन में खूब चढ़ाये रस फल ले।
अविनश्वर फल कभी न चाहा पूजन का फल भी नश्वर
किन्तु आज फल तव पद अर्पित कर चाहूँ फल अविनश्वर।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीं वीरसन्मति वर्धमानातिवीर महावीर पंचनामधेयाय वर्धमान जिनेन्द्राय..

क्या पाऊँ क्या खोऊँ प्रभुवर समझ नहीं आता मुझको
इन्द्रिय सुख मन की इच्छाएँ पागलपन लगतीं खुद को।
जल चन्दन अक्षत पुष्पों को चरु दीपक धूपन फल ले
मिश्रित करके अर्घ चढ़ाता तव पद पाऊँ मुक्ति मिलें।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीं वीरसन्मति वर्धमानातिवीर महावीर पंचनामधेयाय वर्धमान जिनेन्द्राय..

श्री वर्धमान स्तोत्र

प्रथम वलय पूजा

प्रथम वलय कोष्ठोपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि।

1. अदृश्य को दिखाने वाली स्तुति

श्री वर्धमान जिनदेव पदारविन्द –
युग्म–स्थितांगुलिनखांशु–समूहभासि।
प्रद्योततेऽखिल–सुरेन्द्रकिरीट–कोटि:
भक्त्या 'प्रणम्य' जिनदेव–पदं स्तवीमि।।1

वर्धमान जिनदेव युगलपद, लालकमल से शोभित हैं
जिनके अंगुली की नख आभा, से सबका मन मोहित हैं।
देवों के मुकुटों की मणियां, नख आभा में चमक रहीं
उन चरणों की भक्ति से मम, मति थुति करने मचल रही।।1।।

ॐ ह्रीं सर्वातिशय समन्वित चरण कमलाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ – श्री वर्धमान जिनेन्द्र देव के दोनों चरण कमलों में स्थित अंगुलियों के नखों की किरणों के समूह की आभा में देवेन्द्रों के मुकुटों के शिखर प्रकाशित होते हैं। उन जिनदेव के चरणों में भक्ति से प्रणाम करके मैं स्तुति करता हूँ।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो ओहिबुद्धि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अदृश्य वस्तु प्राप्तये वीराय नम:।।

2. चित्त एकाग्र करने वाली स्तुति

नाहंकृतेऽहमिति नात्र चमत्कृतेऽपि,
बुद्धे: प्रकर्षवशतो न च दीनतोऽहम्।

श्रीवीरदेव–गुण–पर्यय–चेतनायां
संलीन – मानस – वश: स्तुतिमातनोमि।।2।।

नहीं अहंकृत होकर के मैं, नहीं चमत्कृत होकर के
बुद्धी की उत्कटता से ना, नहीं दीनता मन रख के।
वीर प्रभू की गुण–पर्यायों, से युत नित चेतनता में
लीन हुआ है मेरा मन यह, अत: संस्तवन करता मैं।।2।।

ॐ ह्रीं शुद्ध गुणपर्यायचैतन्याय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री वर्धमान महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ – यह स्तुति मैं न अहंकार से कर रहा हूँ, न यहाँ किसी प्रकार से चमत्कृत होने पर कर रहा हूँ, न ही बुद्धि की प्रकर्षता के कारण कर रहा हूँ और न दीन होने से कर रहा हूँ, किन्तु श्री वीर भगवान के गुण पर्यायों से सहित चेतना में मेरा मन लीन है इसलिए स्तुति करता हूँ।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो मणपज्जय जिणाणं ।

मंत्र – ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चित्तैकाग्रकरणाय वीराय नम:।।

3. उत्कृष्ट पुण्य फल प्रदायी स्तुति

उच्चै: कुल–प्रभवता सुखसाधनानि
सौन्दर्य–देह–सुभग–द्रविण–प्रभूतम्।
मन्ये न मोक्ष–पथ–पुण्यफलं प्रशस्तं
यावन्न भक्तिकरणाय मन: प्रयास:।।3।।

उच्च कुलों में पैदा होना, सुख साधन सब पा लेना।
सुन्दर देह भाग्य भी उत्तम, धन वैभव भी पा लेना।
मोक्ष मार्ग के लायक ये सब, पुण्य फलों को ना मानूँ
भक्ति करन का मन यदि होता, पुण्य फल रहा मैं जानूँ।।3।।

ॐ ह्रीं लौकिकालौकिक पुण्यफलप्रदाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–उच्च कुल में उत्पन्न होना, सुख के साधन होना, सुन्दर देह होना, सौभाग्य होना, खूब धन होना, इन सबको मैं मोक्ष मार्ग के योग्य प्रशस्त पुण्य का फल तब तक नहीं मानता हूँ जब तक कि भक्ति करने के लिए मन में प्रयास न होवें।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो केवलणाण जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पुण्यफलप्रदाय वीराय नम:।।

4. बुद्धि-कला-विकासिनी स्तुति

तस्मादहं शिवदसाधनसाधनाय
भक्तेरवश्य – करणाय समुद्यतोऽस्मि।
नो चिन्तयामि निज–बुद्धि–कला–स्वशक्तिं
तुक् निस्त्रपो भवति मातरि वा समक्षे।।4।।

इसीलिए अब मोक्ष प्रदायी, साधन को मैं साध रहा
मैं अवश्य भक्ति करने को, अब मन से तैयार हुआ।
मुझमें बुद्धी छन्द कला वा, शक्ती है या नहीं पता
माँ समक्ष ज्यों बालक करता, तज लज्जा मैं करूँ कथा।।4।।

ॐ ह्रीं बुद्धि कलात्मशक्ति वर्धनाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ – इसलिए मोक्ष देने वाले साधन को साधने के लिए मैं भक्ति अवश्य करने के लिए उद्यत होता हूँ। मैं ऐसा करने में अपनी बुद्धि, कला और आत्मशक्ति के बारे में विचार नहीं करूँगा जैसे कि शिशु माँ के सामने निर्लज्ज होकर विना विचारे चेष्टा करता रहता है।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो कोट्ठबुद्धि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं बुद्धिकलात्म शक्तिवर्धनाय वीराय नम:।।

5. लक्ष्मी प्राप्ति स्तुति

सामायिके श्रुतविचारण–पाठकाले
य: सन्मतिं स्मरति नित्यरतिं दधान:।
तस्यैव हस्तगत–पुण्य – समस्त–लक्ष्मीं
दृष्ट्वा न कोऽपि कुरुतेऽत्र बुधस्तथैव।।5।।

सामायिक में नित चिन्तन में, शास्त्रपाठ के क्षण में भी
जो सन्मति को याद कर रहा, नित्य हृदय रति धर के ही।
सकल पुण्य की लक्ष्मी उसके, हाथ स्वयं आ जाती है
ऐसा लख फिर किस ज्ञानी को, प्रभु भक्ति ना भाती है?।।5।।

ॐ ह्रीं हस्तगत लक्ष्मीकराय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–सामायिक में, शास्त्र चिन्तन में, पाठ करते समय जो जीव सन्मति भगवान् में राग रखकर उनको याद करता है, उसके ही हाथ में पुण्य का समस्त वैभव रहता है। यह देखकर भी इस संसार में ऐसा कौन बुद्धिमान होगा जो सन्मति भगवान् का उसी प्रकार ही स्मरण न करे?

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो बीजबुद्धि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं हस्तगत भगवत् लक्ष्मीकराय वीराय नम:।।

6. वंशवृद्धिकर स्तुति

सूते च यो जिनकुले स हि वीरवंशो
वीरं विहाय मनुतेऽन्यकुलाधिदेवम्।
आलोकमाप्य जगतीह रवे: प्रचण्डं
जात्यन्धवद् भ्रमति वा किल कौशिक: स:।।6।।

जो उत्पन्न हुआ जिन कुल में, वीरवंश का वह है पूत
वीर प्रभु को छोड़ अन्य को, मान रहा क्यों तू रे भूत।
सूरज का फैला नहिं दिखता, धरती पर चहुँ ओर प्रकाश
जन्म समय से अंध बने वे, या फिर उल्लू सा आभास।।6।।

ॐ ह्रीं वीरवंशोत्पत्तिकराय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–जो, जिनेन्द्र भगवान के कुल में उत्पन्न हुआ है, वह ही वीर भगवान् का वंशज है अर्थात् उसके कुल देवता भगवान महावीर ही हैं किन्तु जो वीर भगवान को छोड़कर अन्य कुलदेवता आदि को मानता है, वह प्राणी सूर्य के प्रचण्ड प्रकाश को प्राप्त करके मानो जन्मजात अन्धा बना फिरता है या फिर उल्लू की तरह सूर्य के प्रकाश में उसे कुछ दिखता नहीं है।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो पादाणुसारीणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वीरवंश जिनकुल वृद्धिकराय वीराय नम:।।

7. इच्छित फल देने वाली स्तुति

रागादिदोष–युत–मानस–देवतानां
सेवा किमप्यतिशयं न ददाति कस्य।
सेवां करोतु जिनकल्पतरो: सदैव
सेवा किमल्पफलदाऽप्यफलाऽपि तस्य।।7।।

राग द्वेष से सहित रहे जो, ऐसे देवों की सेवा
क्या अतिशय फल दे सकती है, सेवा शिवसुख की मेवा।
श्रीजिनवर हैं कल्पवृक्ष सम, उनकी सेवा सदा करो
कल्पवृक्ष की सेवा भी क्या, अल्पफला या निष्फल हो?।।7।।

ॐ ह्रीं कल्पवृक्षसमफलप्रदाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ – राग आदि दोष से युक्त मन वाले देवताओं की सेवा (भक्ति) किसी को कभी भी उत्कृष्ट, अतिशयकारी फल नहीं देती है। सदैव जिनेन्द्र भगवान् रूपी कल्पवृक्ष की सेवा करो। क्या कभी कल्पवृक्ष की सेवा भी बिना फल वाली या निष्फल हुई है ? अर्थात् नहीं हुई है।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो संभिण्णसोदाराणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मनोवांछित फल प्रदाय वीराय नमः।।

8. सर्व अनिष्ट ग्रह निवारक स्तुति

ये व्यन्तरादिसुर–भावन–देव–वृन्दाः
कृत्वा तु यस्य नमनं सुखमाप्नुवन्ति।
देवाधि–देव–शुभ–नाम–पवित्र–मन्त्रो
व्याहन्त्यनिष्टमखिलं किमु विस्मयन्ति।।8।।

भवनवासि व्यन्तर देवो के, सुर समूह से वन्दित हैं
जिनवर के चरणों में झुक वे, सुख पाते आनन्दित हैं।
देवों के भी देव प्रभू का नाम, मन्त्र है पूजित है
सब अनिष्ट यदि दूर हो गये, बड़ी बात क्यों विस्मित है?।।8।।

ॐ ह्रीं सर्वानिष्ट विनाशकाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ – जो व्यन्तर आदि देव और भवनवासी आदि देवों का समूह है वे देव भी जिन जिनेन्द्र भगवान् को नमन करके सुख प्राप्त करते हैं, उन्हीं देवाधिदेव के शुभ नाम का पवित्र मंत्र यदि सभी अनिष्टों को नाश कर दें तो इसमें विस्मय क्या करते हो ?

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो दूरासादणमदि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सर्वानिष्ट ग्रह निवारकाय वीराय नमः।।

वलय अर्घ

विद्याब्धि–सूरि–पद–पङ्कज–सौरभालि–
शिष्य–प्रणम्य–मुनिना जिनदेव भक्त्या।
श्री वर्धमान–जिन–संस्तवनं व्यधायि
तस्यादिमेऽत्र वलयेऽर्चनयोल्लसामि।

ॐ ह्रीं अष्टदल कमलाधिपतये श्री वर्धमान जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

द्वितीय वलय पूजा

द्वितीय वलय कोष्ठोपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि।

9. कालसर्पादि योग निवारक स्तुति

आस्तां सुदुःषम–कला–कलिकाल–कालः
त्वन्नाम–दर्श–मननं प्रतिमाप्यलं स्यात्।
हस्तंगते गरुड–मन्त्र–विधान–सिद्धेः
कालादि–सर्प–कृतयोग–भयेन किं स्यात्।।9।।

भले बना हो कलीकाल का, प्रभाव सब पर दुखदायी
दर्शन, मनन, सुनाम आपका, बिम्ब मात्र भी सुखदायी।
सिद्ध किया ही गरुड़मन्त्र ही , जिसके हाथ पहुँच जाये
काल सर्प के योग भयों से, फिर किसका मन डर पाये?।।9।।

ॐ ह्रीं सर्वानिष्ट योग भय निवारकाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–भले ही बहुत दुःषम काल के कलिकाल का समय बना रहे किन्तु वीर भगवान् का नाम, उनका दर्शन, उनके बारे में विचारणा और उनकी प्रतिमा ही कलिकाल के दोष को दूर करने के लिए पर्याप्त है। अरे ! जिसे गरुड़ मन्त्र के विधान की सिद्धि हाथ में आ गयी हो उसे कालसर्प आदि योगों का भय क्या करेगा ?

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो दूरफासत्तमदि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रौं ह्रः सर्वानिष्टयोग निवारकाय वीराय नमः।।

10. सर्व रोग हरण स्तुति

रागादि–रोग–हरणाय न कोऽत्र वैद्यः
कर्माष्ट बन्ध–विघटाय रसायनं न।
यो यन्न वेत्ति स न तत्र मतं प्रमाणं
वैद्यस्त्वमेव तव वाक्च रसायनं तत्।।10।।

राग रोग का नाश करूँ मैं, दिखता वैद्य नहीं कोई
अष्ट कर्म बन्धन मिट जाए, नहीं रसायन है कोई।
जो जिस विद्या नहीं जानता, नहीं प्रमाणिक वह ज्ञानी
वैद्य आप हो अतः बन गई महा रसायन तव वाणी।।10।।

ॐ ह्रीं दुर्निवार रोग विनाशाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–इस संसार में राग आदि रोग को नष्ट करने के लिए कोई वैद्य नहीं है और आत्मा से अष्ट कर्म के बन्धन को दूर करने के लिए कोई रसायन नहीं है। जो जिस रोग का जानकार नहीं है, वह उस रोग में प्रामाणिक नहीं माना जाता है। इसलिए हे भगवन् ! आप ही वैद्य हैं और आपके वचन ही रसायन हैं।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो दूरघाणत्तमदि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रौं ह्रः दुर्निवाररोग रसायनाय वीराय नमः।।

11. मिथ्या आग्रह नाशक स्तुति

शस्त्रास्त्रभ्रूविकृतिलोहित–नेत्रवन्तं
क्रोड़ीकृताघ–ममतार्त–विरूपरौद्रम्।

देवं मनन्ति जगति प्रविजृम्भितेऽपि
चिद्बोधतेजसि सतीह किमन्धता वा।।11।।

शस्त्र अस्त्र से सहित हुए जो, भ्रकुटि चढ़ रहीं लाल नयन
ममता पाप दुःख ले बैठे, देह विरूप क्रूर है मन।
लोग इन्हें भी प्रभू मानते, जिस जग में प्रभु आप रहें
चेतन ज्ञान प्रकाश दिखे ना, और अन्धता किसे कहें ?।।11।।

ॐ ह्रीं मिथ्याग्रहापहरणाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ – शस्त्र–अस्त्र रखने वाले, भौंओ को विकृत किये हुए, लाल–लाल आँखों वाले, पाप–ममत्व तथा पीड़ा को अपने पास रखें हुए, विद्रूप और भयंकर दिखने वालों को भी लोग इस संसार में आपके चैतन्य ज्ञान का प्रकाश फैला होने पर भी देव मानते हैं, इससे बढ़कर अन्धता और क्या होगी ?

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो दूरसवणत्तमदि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रौं ह्रः मिथ्याबुद्धि हरणाय वीराय नमः।।

12. पुण्योदयकरी स्तुति

पुण्योदयेन तव तीर्थकराख्यकर्म–
माहात्म्यतः कलिलघातिविधिप्रणाशात्।
तीर्थोदयोऽभवदिहात्म–हिताय वीर !
पुण्यद्विषैर्नु महिमा कथमभ्युपेतः ।।12।।

तीर्थंकर शुभ नाम कर्म के, पुण्य उदय की महिमा से,
चार घातिया पाप नाश से, तीर्थोदय की गरिमा से।
पुण्य उदय से उदित तीर्थ ही, वीर! आत्महित का कारण
बने पुण्य के द्वेषी उनको, हो तब महिमा क्यों धारण ?।।12।।

ॐ ह्रीं पुण्यतीर्थोदयाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ – पाप रूप घाति कर्मों के नाश से आपके तीर्थंकर नाम कर्म के माहात्म्य से जो पुण्य उदय हुआ है। उसी पुण्योदय से इस संसार में हे वीर भगवन् ! आपका तीर्थोदय हुआ था जो कि सभी जीवों के आत्महित के लिए है। फिर पुण्य से द्वेष रखने वाले आपके तीर्थ की महिमा को कैसे अंगीकार कर सकते हैं? अर्थात् पुण्य से द्वेष रखने वाले तीर्थ और भगवान् की महिमा नहीं समझ सकते हैं।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो दूरदरसित्तमदि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रौं ह्रः पुण्यतीर्थोदयाय वीराय नमः।।

13. समृद्धिवर्धक स्तुति

गर्भोत्सवे प्रतिदिनं पृथुरत्नवृष्टि –
र्जन्मोत्सवे सकल–लोक–सुशान्त–वृत्तिः।
सर्वातिशायनगुणा दश जन्मनस्ते
सूक्ष्मेण को गणयितुं गुणतां तु शक्तः।।13।।

गर्भ समय के कल्याणक में, प्रतिदिन रत्नों की वर्षा
जन्म समय के कल्याणक में, सकल लोक में सुख हर्षा।
सूक्ष्म रूप से तव गुण गण को, गिनने में हो कौन समर्थ?
दश अतिशय जो मूर्त रूप हैं, समझो उनमें कितना अर्थ।।13।।

ॐ ह्रीं सर्वसमृद्धिवर्धकाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–गर्भ कल्याणक के समय प्रतिदिन बहुत रत्नों की वर्षा होती है। जन्म कल्याण के समय पूरे लोक में एक क्षण के लिए शान्ति हो जाती है। आपके जन्म समय के सर्वोत्कृष्ट दश गुण हैं किन्तु सूक्ष्म रूप से उन गुणों के भाव को कौन गिनने में समर्थ हो सकता है ? अर्थात् कोई नहीं।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो दसपुव्वीणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रौं ह्रः सर्वसमृद्धिकराय वीराय नमः।।

14. जन्मोत्सव स्तुति

निःस्वेदताऽस्ति वपुषो मलशून्यता ते
स्वाद्याकृतिः परमसंहननं सुरूपम्।
सौलक्ष्य –सौरभ–मपार–समर्थता च
सप्रीतिभाषण–मथा–सम–दुग्धरक्तम्।।14।।

स्वेद रहित है निर्मल है तनु, परमौदारिक सुन्दर रूप
प्रथम संहनन पहली आकृति, शुभलक्षणयुत सौरभ कूप।
अतुलनीय है शक्ति आपकी, हित–मित–प्रिय वचनामृत हैं
दुग्धरंग सम रक्त देह का, दश अतिशय परमामृत हैं।।14।।

ॐ ह्रीं दश जन्मातिशयधारकाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–शरीर का पसीना रहित होना (1), मल–मूत्र रहित होना (2), श्रेष्ठ प्रथम संस्थान (3), उत्कृष्ट संहनन (4), सुन्दर रूप होना (5), शुभ लक्षणों से सहित शरीर होना(6), सुगन्धित शरीर होना (7), अपार शक्ति होना (8), सबसे प्रेम पूर्वक बोलना (9), और किसी से समानता नहीं रखने वाला शरीर में सफेद रक्त होना (10), ये जन्म के दश अतिशय हैं।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो चउदसपुव्वीणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रौं ह्रः जन्मोत्सव धारकाय वीराय नमः।।

15. केवलज्ञानोत्सव स्तुति

क्रोशं चतुःशतमिलाफलके सुभिक्षः
शून्यश्च जीववधभुक्त्युपसर्गतायाः।

विद्येश्वर: खगमनं नख–केश–वृद्धि–
छाया–विहीन–मनिमेष–मुखं चतुष्कम्।।15।।

कोस चार सौ तक सुभिक्ष है, प्राणी वध उपसर्ग रहित
बिन भोजन नित गगन गमन है, नख केशों की वृद्धि रहित।
बिन छाया तनु चार मुखों से, निर्निमेष लोचन टिमकार
सब विद्याओं के ईश्वर हो, दश केवल अतिशय सुखकार।।15।।

ॐ ह्रीं दशकेवलज्ञानातिशयधारकाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–चार सौ कोश तक पृथ्वी तल पर सुभिक्ष होना (1), जीव वध का अभाव(2), भोजन का अभाव(3), उपसर्ग का अभाव(4), सभी विद्याओं के ईश्वर(5), आकाश में गमन(6), नख, केश की वृद्धि नहीं होना (7), छाया नहीं होना (8), टिमकार रहित मुख (9), और चार मुख होना (10), ये केवलज्ञान के दश अतिशय हैं।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो अट्ठंगमहाणिमित्तकुसलाणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रौं ह्रः केवलज्ञानोत्सवधारकाय वीराय नमः।।

16. आनन्ददायी स्तुति

जन्मक्षणे प्रथित–पर्वत–मन्दराख्ये
सौधर्म–देव–विहितस्नपनोपचारे।
आनन्दनिर्भररसेन सुविस्मितः सन्
'वीरं' चकार तव नाम सुरेन्द्रमुख्यः ।।16।।

जन्म समय पर मन्दर मेरु, पर्वत जो विख्यात रहा
जिस पर ही सौधर्म इन्द्र ने, प्रभु का कर अभिषेक कहा।
'वीर' आपका नाम यही शुभ, धरती पर विख्यात रहे
हो आनन्दित विस्मित होकर, देवों के भी इन्द्र कहे।।

ॐ ह्रीं सर्वानन्दकराय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–जन्म कल्याणक के समय मन्दर (सुमेरु) नाम के प्रसिद्ध पर्वत पर सौधर्म देव के द्वारा अभिषेक क्रिया की गई थी। आनन्द रस से भरे उस सौधर्म इन्द्र ने उसी पर्वतपर विस्मित होते हुए आपका नाम 'वीर' यह शुभ नाम रखा था।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो पण्णसमणाणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रौं ह्रः सर्वानन्दकराय वीराय नमः।।

17. सर्पादि भय निवारक स्तुति

क्रीडाक्षणे सुरतुकैः सह शैशवेऽपि
आयात एव भुवि संगमनाम देवः।
नागस्य रूपमवधार्य भयाय रौद्रं
निर्भीरभू– 'र्महतिवीर' इति प्रसिद्धिः।।17।।

शैशव वय में क्रीड़ा करते, देव बालकों के संग आप
संगम देव तभी आ पहुँचा, देने को प्रभु को संताप।
नाग रूप धर महा भयंकर, लखकर वीर न भीत हुए
'महावीर' यह नाम रखा तब, देव स्वयं सब मीत हुए।।17।।

ॐ ह्रीं सर्पादिजन्तुभयनिवारकाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–बाल्यावस्था में भी देव–बालकों के साथ क्रीड़ा के समय संगम नाम का देव पृथ्वी पर आया उस देव ने नाग का भयंकर रूप वीर बालक को डराने के लिए रखा। वीर निर्भीक थे। इसलिए ही संगम देव ने 'महति वीर' (महावीर) नाम रख दिया। इस प्रकार 'महावीर' नाम प्रसिद्ध हुआ।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो पत्तेयबुद्धाणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ श्रां श्रीं श्रूं श्रौं श्रः सर्पादिभय निवारकाय वर्धमानाय नमः।।

18. संदेह निवारक स्तुति

शङ्कां निधाय हृदि तौ गगनं चरन्तौ
ऋद्धीश्वरौ विजय-संजयनामधेयौ
त्वामीश! वीक्ष्य लघु दूरत एव हर्षात्
प्रोच्चार्य 'सन्मति' सुनाम गतौ विशङ्कौ।।18।।

शास्त्र विषय संदेह धारकर, चले जा रहे दो मुनिराज
संजय विजय नाम हैं जिनके, गगन ऋद्धि ही बना जहाज।
देख दूर से हर्षित होकर, लख कर ही नि:शंक हुए
धन्य-धन्य है इनकी मति भी, 'सन्मति' कहकर दंग हुए।।18।।

ॐ ह्रीं बुद्धिसंदेह वारकाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ-संजय-विजय नाम के दो ऋद्धिधारी मुनीश्वर अपने हृदय में संदेह धारण करके आकाश में चले जा रहे थे। हे ईश ! आपको दूर से ही देखकर शीघ्र ही वे संदेह रहित हो गए और बड़े हर्ष से 'सन्मति' यह शुभ नाम कहकर चले गए।

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो वादित्तबुद्धीणं जिणाणं।

मंत्र - ॐ श्रां श्रीं श्रूं श्रौं श्र: बुद्धिसंदेह हराय वर्धमानाय नम:।।

19. दीक्षा प्रदायी स्तुति

तीर्थेश्वरा विगतकाल-चतुर्थकेऽस्मिन्
संदीक्षिता बहुलसंख्यक - भूमिनाथै:।
जानन्नपि त्वमगमो न हि खेदमेको
वाचंयमो द्विदशवर्षमभी-र्विहृत्य ।।19।।

इस चतुर्थ काल में जितने , पहले जो तीर्थेश हुए
कई कई राजाओं के संग, दीक्षित हो तपत्याग किए।
आप जानते थे यह भगवन, फिर भी आप न खेद किए
मौन धारकर एकाकी हो, बारह वर्ष विहार किए।।19।।

ॐ ह्रीं जिनदीक्षाधारकाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ - इस बीते हुए चतुर्थ काल में तीर्थंकर बहुत से राजाओं के साथ दीक्षित हुए थे। आप यह जानते हुए भी एकाकी रहकर मौन रहते हुए और बारह वर्ष तक निर्भीक होकर विहार करते रहे किन्तु कभी खेद को प्राप्त नहीं हुए।

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो अणिमाइड्ढि जिणाणं।

मंत्र - ॐ श्रां श्रीं श्रूं श्रौं श्र: जिनदीक्षा प्रदाय वर्धमानाय नम:।।

20. चारित्र विशुद्धि वर्धक स्तुति

प्राप्त-क्षयोपशममात्रकषायतुर्यो
मत्तेऽपि वृद्धि-मुपयाति परं चरित्रम्।
त्वं 'वर्धमान' इति नाम भुवि प्रपन्नो
न्यासे प्रभाव इह नामनि भावमुख्यात्।।20।।

चौथी कषाय मात्र का जिनको, क्षयोपशम गत भाव रहा
हो प्रमत्त यदि बीच-बीच में, वर्धमान चारित्र रहा।
इसीलिए तो नाम आपका, 'वर्धमान' भी ख्यात हुआ
नाम न्यास में भी भावों, से न्यास बना यह ज्ञात हुआ।।20।।

ॐ ह्रीं सामायिक चारित्रवृद्धिकराय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ - मात्र चतुर्थ संज्वलन कषाय का क्षयोपशम आपकी आत्मा में था। प्रमत्त गुणस्थान में आने पर भी आपका चारित्र वृद्धिंगत था। अर्थात् आप वर्धमान चारित्र के धारी थे। इस प्रकार इस पृथ्वी पर आप 'वर्धमान' नाम को प्राप्त हुए। भावों की मुख्यता से ही नाम निक्षेप में प्रभाव आता है।

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो महिमाइड्ढि जिणाणं।

मंत्र - ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं चारित्र वृद्धि कराय वर्धमानाय नम:।।

21. रौद्र उपद्रव नाशक स्तुति

दीक्षोत्सवे तपसि लीनमना बभूव
चैको भवान् प्रविजहार सहिष्णुयोगी।
उज्जैनके पितृवने समधात् समाधि–
मुग्रैरुपद्रवसहेऽ'प्यतिवीर' संज्ञा।।21।।

तप कल्याणक होने पर प्रभु, तप में ही संलीन हुए
एकाकी बन कर विहार कर, सहनशील योगी जु हुए।
उज्जैनी के मरघट पर जब, आप ध्यान में लीन हुए
उग्र उपद्रव सहकर के ही, नाम लिया 'अतिवीर' हुए।।21।।

ॐ ह्रीं उग्रोपद्रवनाशकाय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–दीक्षा कल्याणक होने पर आप तप में लीन हो गए थे। आप सहनशील योगी थे, अकेले ही विहार करते थे। उज्जैन नगरी के श्मशान में जब आप समाधि (ध्यान) धारण किये थे तभी उग्रता के साथ हुए उपद्रव को सहन किया। जिससे आपकी 'अतिवीर' संज्ञा हुई।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो लघिमाइड्ढि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं सर्वोपसर्ग निवारकाय महावीराय नम:।।

22. अनिष्ट बंधन विनाशी स्तुति

या बंधनैश्च विविधै: किल संनिबद्धा
संपीडिता विलपिता समयेन नीता।
भक्त्योल्लसेन विभुतां प्रविलोकमाना
सा चन्दना गतभया तव लोकनेन।।22।।

नाना विध बंधन ताडन पा, जो पर घर में बंधी पड़ी
पीड़ित होकर रोती रहती, कष्ट सहे हर घड़ी – घड़ी।

वीर प्रभू का दर्शन पाऊँ, भक्ति और उल्लास भरी
दर्शन पाकर वही चन्दना, भय–बन्धन से तब उभरी।।22।।

ॐ ह्रीं अनिष्टबंधनविनाशाय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ – जो अनेक प्रकार के बंधनों से बंधी थी, पीड़ित थी, रोती रहती थी, समय को गुजार रही थी। ऐसी चन्दना ने भी भक्ति और उल्लास से जब आपकी विभुता को देखी तो आपको देखने मात्र से हे भगवन् ! वह भय मुक्त हो गई थी।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो गरिमाइड्ढि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं ब्लूं अनिष्टबंध विनाशाय जिनाय नम:।

23. उत्कृष्ट पद प्रदायी स्तुति

ज्ञानोत्सवेऽशुभदतीव सभा पृथिव्या
गत्वोपरीह जिन! पञ्चसहस्र–दण्डान्।
मिथ्यादृशां न भवतो मुख–दर्श–पुण्य–
मुच्छ्राय एव भगवन्! सुविराजमान:।।23।।

ज्ञानोत्सव होने पर प्रभु की, समवसरण सी सभा लगी
पाँच हजार धनुष ऊपर जा, चेतनता जब पूर्ण जगी।
मिथ्यादृष्टि जीवों को तव, मुख दर्शन का पुण्य कहाँ ?
इसीलिए इतने ऊपर जा, शोभित होते बैठ वहाँ।।23।।

ॐ ह्रीं उत्कृष्टपदविराजमानाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–हे जिन ! ज्ञान कल्याणक के समय इस पृथ्वी से पाँच हजार धनुष ऊपर जाकर आपकी समवसरण सभी लगी थी जो अत्यन्त शोभित होती थी। (घोर) मिथ्यादृष्टियों को आपके मुख दर्शन का पुण्य नहीं है इसलिए ही हे भगवन्! आप इतनी ऊँचाई पर विराजमान हुए थे।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो पत्तरिड्ढि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं णमो अरिहंताणं नम:।

24. अहंकार नाशी स्तुति

मानोद्धत: सकलवेदपुराणविद् यो
मानादिभूस्थजिन–बिम्बमथेन्द्र–भूते:।
मानो गतो विलयतामवलोक्य तेऽस्य
सामर्थ्यमन्यपुरुषेषु न दृश्यते तत्।।24।।

हुआ मान से उद्धत है जो, सकल पुराण शास्त्र ज्ञाता
मानस्तम्भ बने जिन–बिम्बों, को लख इन्द्रभूति भ्राता।
मान रहित हो खड़े रहे ज्यों, भूल गये हों सब कुछ ही
छोड़ आपको अन्य पुरुष में, यह प्रभाव क्या होय कभी?।।24।।

ॐ ह्रीं मिथ्यामदविनाशाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ – जो मान से उदण्ड था, समस्त शास्त्र और पुराणों का जानकार था, ऐसे इस इन्द्रभूति का मान भी मानस्तम्भभूमि में स्थित जिनबिम्बों को देखकर विलय हो गया था। इसलिए आपके जैसी सामर्थ्य अन्य पुरुषों में नहीं देखी जाती है।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो पाकामड्ढि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं क्रौं मिथ्यामदविनाशाय जिनाय नम:।।

25. संकट मोचन स्तुति

साक्षाद् विलोक्य सचराचरविश्वमन्त:
कैवल्य–बोधवदनन्तसुखस्य भोक्ता।

यैर्मन्यते जिन! सदा परमात्मरूप–
मित्थं कथं वद भवेयु–रिहार्तयुक्ता:।।25।।

अन्तरंग में निज आतम से, विश्व चराचर देख रहे,
केवल ज्ञान साथ जो होता, वह अनन्त सुख भोग रहे।
हे जिन! तव परमात्म रूप को, मान रहे जो इसी प्रकार
अहो! बताओ कैसे फिर वे, दु:खी रहेंगे किसी प्रकार।।25।।

ॐ ह्रीं अनन्तज्ञानसुखसहिताय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ – अपनी आत्मा में चराचर सहित विश्व को प्रत्यक्ष देखकर केवलज्ञान के साथ होने वाले अनन्त सुख के आप भोक्ता हुए। हे जिन ! जो परमात्मा रूप को इसी प्रकार मानते हैं वे इस लोक में बताओ कैसे दु:खी रह सकते हैं ? अर्थात् नहीं रह सकते हैं।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो ईसत्तड्ढि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं णमो अरुहंताणं नम:।।

26. कुलदीपक दायी स्तुति

अभ्यन्तरे बहिरपीश! विभासमानो
विश्वं तिरस्कृतमहोऽत्र चिदर्चिषैतत् ।
हे ज्ञातृवंश–कुल–दीपक! चेतनायां
यत् सद् विभाति यदसन्न विभाति तत्र।।26।।

बाहर भीतर ईश! आप तो, पूर्ण रूप से भासित हो
तव चेतन के महा तेज से, तेज समूह पराजित हो।
ज्ञातृवंश के हे कुल दीपक!, ज्ञातापन चेतनता में
जो है वह प्रतिभासित होता, जो ना दिखता ना उसमें।।26।।

ॐ ह्रीं चैतन्यपूर्ण–तेज: सहिताय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–हे ईश ! आप बाहर–भीतर प्रकाशमान हैं। अहो ! आपकी चेतना का यह प्रकाश सब ओर से यहाँ से तिरस्कृत कर रहा है। हे ज्ञातृवंश के कुलदीपक ! आपकी ज्ञान चेतना में जो वस्तु है वह दिखती है और जिसका अस्तित्व नहीं है वह नहीं दिखती है।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो वसित्तड्ढि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं पूर्णचैतन्याय वीराय नम:।।

27. सम्यक्त्व प्रदायी स्तुति

त्वं चित्क्रमाक्रमविवर्तविशुद्धि–युक्त:
स्वात्मानमात्मनि विभाव्य विभावमुक्त:।
वैभाविकं वपुरिदं जिन! पश्यसि स्वं
सम्यक्त्वकारणमहो व्यभवत् परेषाम्।।27।।

चेतन की गुण–पर्यायों में, तुम विशुद्धि युत होकर के
आतम में आतम को पाकर, सब विभाव को तज कर के।
निज शरीर को भी हे जिनवर!, वैभाविक ही देख रहे
दूजों को वह ही तन देखो!, सम्यगदर्शन हेतु लहे।।27।।

ॐ ह्रीं सर्वगुणपर्यायज्ञाताय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ – हे जिन ! चेतना के गुण, पर्यायों के परिणमन में आप विशुद्धि से युक्त हैं। अपनी आत्मा को अपनी आत्मा में ही अनुभव करके आप विभावों से रहित हैं। आप अपने इस वैभाविक शरीर को भी देख रहे हैं। अहो ! आपका शरीर वैभाविक होकर भी दूसरों के लिए सम्यक्त्व का कारण बना है।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो अप्पडिघादड्ढि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं विशुद्धिवर्धकाय जिनाय नम:।।

28. पराक्रमकारी स्तुति

छत्रत्रयं वदति ते त्रिजगत्प्रभुत्वं
शास्ति स्वयं न मुखतो मदगर्वशून्य:।
सत्यं सतां विधिरयं हि पराक्रमाणां
वीरो जितेन्द्रियमना भगवानसि त्वम्।।28।।

तीन लोक में प्रभुता तेरी, तीन छत्र कह देते हैं
मद घमण्ड से रहित हुए जो, कैसे कुछ कह सकते हैं।
महा पराक्रम धारी सज्जन, इसी रीति से रहते हैं
इसीलिए तो वीर जितेन्द्रिय, भगवन तुमको कहते हैं।।28।।

ॐ ह्रीं छत्रत्रयधारकाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ – तीनों छत्र आपके वैभव का बखान इस लोक के लोगों के लिए कर रहे हैं। जो मद–गर्व से रहित होता है वह स्वयं अपने मुख से अपनी विभुता नहीं कहता है। सच है – पराक्रमी सत्पुरुषों की ऐसी ही रीति होती है। इसलिए आप वीर हैं। मन, इन्द्रियों के विजेता हैं और भगवान् हैं।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो अंतड्ढाणड्ढि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं छत्रत्रयसहिताय महावीराय नम:।।

29. सिंहासन दायी स्तुति

सिंहासनोपरि विराजितुमत्र लोभा
वाञ्छन्त्युपायशतकै र्भुवि चित्तलोभात्।
लाभेऽपि तस्य चतुरङ्गुलमूर्ध्वमेति
निर्लोभता वद भवत्तुलिता क्व चान्यै:।।29।।

देखा जाता है लोभी जन, सिंहासन पर बैठन को
करें उपाय सैकड़ों जग में, मन में लोभ की ऐंठन हो।

सिंहासन का लाभ हुआ पर, आप चार अंगुल ऊपर
कहो आप सा निर्लोभी क्या, और कहीं हो इस भूपर।।29।।

ॐ ह्रीं सिंहासनप्रातिहार्यसहिताय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ – लोभी लोग इस संसार में अपने मन के लोभ के कारण सैकड़ों उपाय करके सिंहासन पर बैठना चाहते हैं। आपको सिंहासन का लाभ होने पर भी आप उससे चार अंगुल ऊपर रहे। अन्य लोगों के साथ आपकी तुलना बताओ कैसे की जाय ?

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो कामरूवड्ढि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं सिंहासनोपरिशोभिताय वीराय नमः।।

30. छल कपट नाशी स्तुति

ऊर्ध्वं मुहु र्गदति याति च निम्नवृत्तिं
मायाविनां तु मनसा सम वक्रवृत्तिम्।
तेभ्यस्तनु स्तव विभाति सुचामरौघो
मायातिशून्यहृदयो भवदन्यना न।।30।।

ऊपर जाकर बार-बार, फिर, फिर नीचे आते चामर
मायावी जन कुटिल मना ज्यों, मानो वक्रवृत्ति रखकर।
चमरों से शोभित प्रभु तन ये सबसे मानो कहता है
अन्य किसी का हृदय यहाँ पे, बिन माया ना रहता है।।30।।

ॐ ह्रीं सुरचामरशोभिताय क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–ये सुन्दर चामरों का समूह बार-बार ऊपर जाकर नीचे आ जाता है। मायावी लोगों की तो मन के साथ कुटिल वृत्ति रहती है। यह बात चामरों का

समूह कहता है। इन चामरों के समूह से आपका शरीर सुशोभित होता है जो यह कह रहा है कि आपके अलावा कोई पुरुष माया से अत्यन्त शून्य हृदय वाला नहीं है।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो गमणगामिड्ढि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं सुरचामर-शोभिताय वीर-जिनाय नमः।।

31. मुख तेज वर्धन स्तुति

अस्मिन्भवे भविनि रोषविभावभाजि
चैतन्यवत्यपि मुखं न बिभर्ति तेजः।
भामण्डलं हि परितो तव भासमानं
यद् वीर! वक्ति भविसप्त-भवानुगाथाम्।।31।।

क्रोध विभाव भाव वाले जो, भव्य जीव संसृति में हैं
चेतन होकर के भी उनके, मुख पर तेज नहीं कुछ है।
वीर प्रभु तव मुख मण्डल का, तेज बताता भामण्डल
भव्य जनों के सप्त भवों की, गाथा गाता है प्रतिपल।।31।।

ॐ ह्रीं भामण्डलप्रातिहार्य सहिताय क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ – इस संसार में रोष रूप विभाव भावों को रखने वाले भव्य जीवों में चेतनता होने पर भी मुख तेज को धारण नहीं करता है। हे वीर ! आपके मुख के चारों ओर यह भामण्डल प्रकाशमान हो रहा है वह भव्य जीवों के सात भवों की गाथा कह रहा है।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो जलचारणड्ढि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं भामण्डलतेजः सहिताय वीराय नमः।।

32. सम्मोहनकारी स्तुति

चित्रं विभो! त्रिभुवनेश! जिनेश! वीर!
न्यूने त्वयि द्रुतविहास्य-रतेन देव!
दिव्यध्वनिं तदपि कर्णयितुं तु भव्या
आयान्ति ते रतिवशादनुयन्ति हास्यम्।।32।।

तीन लोक के हो ईश्वर तुम, तुम जिनेश तुम वीर विभू
हास्य नहीं है रती नहीं है, तव चेतन में अहो प्रभू।
फिर भी दिव्यध्वनि को सुनकर, भव्य जीव रति भाव धरें
तत्त्व ज्ञान पी-पीकर मानो, हो प्रसन्न मन हास्य करें।।32।।

ॐ ह्रीं दिव्यध्वनिप्रातिहार्ययुक्ताय क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ - हे विभो ! हे त्रिभुवन के ईश ! हे जिनेश ! हे वीर ! आपमें शीघ्र हास्य और रति भाव नहीं हैं फिर भी यह आश्चर्य है कि हे देव ! जो भव्य जीव आपकी दिव्य ध्वनि को सुनने के लिए आते हैं, वे राग के कारण से हास्य को प्राप्त होते हैं।

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो जंघाचारणड्ढि जिणाणं।

मंत्र - ॐ ह्रीं दिव्योपदेशमोहिताय वीराय नमः।।

वलय अर्घ

विद्याब्धि-सूरि-पद-पङ्कज-सौरभालि-
शिष्य-प्रणम्य-मुनिना जिनदेव भक्त्या।
श्री वर्धमान-जिन-संस्तवनं व्यधायि
तस्य द्वितीय वलयेऽर्चनयोल्लसामि।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिदल कमलाधिपतये श्री वर्धमान जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

तृतीय वलय पूजा

तृतीय वलय कोष्ठोपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि।

33. शोक विनाशक स्तुति

सामीप्यतोऽप्यरतिशोकमतिं विहाय
वैडूर्यपत्र-हरिताभ-मणिप्रशाखः।
सम्प्राप्य नाम लभते विटपोऽप्यशोकः
शोभां नरोऽपि यदि किं तव भक्तितोऽतः।।33।।

नाना विध वैडूर्य मणी की, हरित मणिमयी शाखायें
तव समीपता से ही तज दी, अरति शोक की बाधायें।
मानो इसीलिए उस तरु का नाम अशोक कहा जाता
क्या आश्चर्च आप भक्ति से, यदि मनुष्य शोभा पाता।।33।।

ॐ ह्रीं अशोक वृक्ष प्रातिहार्य सहिताय क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ-आपके सामीप्य से अरति और शोक बुद्धि को छोड़कर वृक्ष भी अशोक नाम पा लेता है और वैडूर्य के पत्ते तथा हरित आभा वाली मणि की शाखा वाला हुआ शोभा को पाता है। अतः यदि आपकी भक्ति से मनुष्य भी अरति, शोक को छोड़कर शोभा पा लेता है तो इसमें क्या बात है ? अर्थात् कुछ भी नहीं।

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो पुप्फफल चारणड्ढि जिणाणं।

मंत्र - ॐ ह्रीं अशोकवृक्षयुक्ताय वीराय नमः।।

34. आत्महत्या विनाशक स्तुति

यान्ति क्व भो! भविजना भयभीतवश्यात्
कुर्वन्ति किं निजहतिं च जुगुप्सया वा।
सम्प्राप्नुवन्त्वभयता-मभय-प्रसिद्ध-
पाद-द्वयं वदति वादितदुन्दुभिस्ते।।34।।

अरे–अरे ओ भविजन क्यों तुम, क्यों इतने भयभीत हुए
आत्मग्लानि से आत्मघात को, करने क्यों तैयार हुए।
अभय प्रदायी चरण कमल को, प्राप्त करो अरु अभय रहो
देव दुन्दुभी बजती–बजती, यही कह रही वीर प्रभो।।34।।

ॐ ह्रीं देवदुन्दुभिप्रातिहार्य सहिताय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–भो ! भव्य जीव आप भयभीत होने से कहाँ जा रहे हो और ग्लानि से आत्महत्या क्यों करते हो ? आप लोग अभय के लिए प्रसिद्ध इन दोनों चरणों को प्राप्त करो और अभयता प्राप्त करो ऐसा आपकी बजती हुई देव दुन्दुभि कहती है।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो अग्गिधूमचारणड्ढि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं देवदुन्दुभिप्रातिहार्य समन्विताय वीराय नमः।।

35. कामवेदना नाशक स्तुति

पुष्पाणि सन्ति सकलानि नपुंसकानि
हर्षन्ति तानि वनिता–नर–संगयोगात्।
कामस्त्रिवेदसहित: पततीह कामं
देवेन्द्रपुष्पपतनाच्छलतोऽभिमन्ये।।35।।

पुष्प रूप में खिले जीव सब, भाव नपुंसक वेद धरें
तभी कभी नर से हर्षित हों, नारी संग भी हर्ष धरें।
देवेन्द्रों की पुष्प वृष्टि जो, प्रभु सम्मुख नित गिरती है
तीन वेद से सहित काम यह, गिरता है यह कहती है।।35।।

ॐ ह्रीं सुरपुष्पवृष्टि शोभिताय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–सभी पुष्प नपुंसक वेद वाले होते हैं। यहाँ तीनों वेदों से सहित काम ही देवेन्द्रों के द्वारा होने वाली पुष्प वृष्टि के छल से अत्यधिक गिर रहा है, ऐसा मैं

मानता हूँ।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो मेघधारचारणड्ढि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं निष्कामात्मने जिनाय नमः।।

36. भू सम्पदादायी स्तुति

तीर्थंकर–प्रकृतिपुण्य–वशेनभूमि–
दृष्टाऽतिकान्त–मणिकाभरणैक–कान्ता।
स्वच्छा च भावनसुरैर्विहितोपकारा
धान्यादि–पुष्पविभवै–र्हसतीव नारी।।36।।

पुण्य प्रकृति तीर्थंकर से ही, भूमि रत्नमय स्वयं हुई
भवनवासि देवों के द्वारा, स्वच्छ दिख रही साफ हुई।
पुष्प फलों से भरी दिख रही, धान्यादिक से पूर्ण तथा
तीर्थंकर का गमन देखकर, भूनारी यह हँसे यथा।।36।।

ॐ ह्रीं देवातिशयपवित्राय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–तीर्थंकर प्रकृति के पुण्य के कारण से भूमि अत्यन्त सुन्दर रत्नों के आभूषणों को धारण करने वाली एक स्त्री सी दिखाई देती है (1), वह भूमि भावनवासी देवों के द्वारा की गई सेवा से स्वच्छ होती है (2), और वह मानो धान्य आदि पुष्पों के वैभव से सहित हुई हंसती हुई नारी ही हो (3)।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो तंतुचारणड्ढि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं सर्वसुखसम्पन्नाय जिनाय नमः।।

37. सुभिक्ष करी स्तुति

वायु: प्रभो: पथविहारदिशानुसारी
वायु: सुगन्धघन – मिश्रित–सौख्यकारी।

वायु: सुगन्ध–जल – वर्षण – चित्तहारी
वायु: सुरस्त्रिदशराज–निदेश–धारी।।37।।

जिधर दिशा में गमन आपका, उसी दिशा में वायु बहे
अति सुगन्धमय पवन सूंधकर, अचरज करता विश्व रहे।
मन्द–मन्द अति जल वर्षा में, भी सुगन्ध सी आती है
वायु कुमार देव से सेवा, इन्द्राज्ञा करवाती है।।37।।

ॐ ह्रीं चतुर्णिकायदेवपूजिताय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–वायु प्रभु के पथ विहार की दिशा के अनुसार बहती है (4), वह वायु अत्यधिक सुगन्ध से मिश्रित हुई सुखकारी होती है (5), सुगन्धित जल की वर्षा के साथ वायु बहती है। (6) यह वायु कुमार देव मुख्य इन्द्र की आज्ञा को धारण करने वाले हैं।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो सिहाचारणड्ढि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं सर्वदेवपदपूजिताय वीराय नमः।।

38. चिन्त हरण करी स्तुति

न्यासो हि यत्र चरणस्य विनिर्मितानि
पद्मानि सौरभमयानि सुवर्णकानि।
देवैर्नभांसि विहृतौ कुसुमार्पितानि
ध्यानान् मनांसि यदि मेऽपि किमद्भुतानि।।38।।

देवों द्वारा पद विहार में, नभ में कमल रचे जाते
वही कमल फिर स्वर्णमयी हों, अरु सुगन्ध से भर जाते।
आप चरण के न्यास मात्र से, कुसुम इस तरह होते हैं
अद्भुत क्या यदि आप ध्यान से, मनः कमल मम खिलते हैं।।38।।

ॐ ह्रीं पादन्यास कमलरचिताय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–

महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ – जहाँ आपके चरण रखे गए वहीं पर देवों के द्वारा निर्मित हुए वे कमल सुगन्धमय और सुवर्ण के हो गए। देवों ने विहार के समय आकाश को कुसुम मय कर दिया। यदि आपके ध्यान से मेरे मनः प्रदेश भी ऐसे ही सुगन्धित और स्वर्णमय हो जाएँ तो इसमें आश्चर्य क्या है ?

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो पवणचारणड्ढि जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं युगल–पाद–पूजिताय वीराय नमः।।

39. मित्र वर्धक स्तुति

दिव्यध्वनि–र्वहति यस्तु मुखारविन्दा–
दर्धं च तस्य खलु मागधजातिदेवाः।
दूरं तु वीर! सहजेन विसर्पयन्ति
मैत्रीं मिथः सदसि भूरि विभावयन्ति।।39।।

आप मुख कमल से हे भगवन! दिव्य ध्वनि जो खिरती है
मागध जाति देव से आधी, वही दूर तक जाती है।
इसीलिए वह अर्ध मागधी, कहलाती सुखकर भाती
तथा परस्पर में मैत्री भी, जीवों में देखी जाती।।39।।

ॐ ह्रीं मैत्री प्रसारकाय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–हे वीर ! जो दिव्य ध्वनि आपके मुखकमल से प्रवाहित होती है, उसका आधा भाग मागध जाति के देव सहज ही दूर तक फैला देते हैं।(8) तथा सभा में परस्पर मैत्री को खूब बनाए रखते हैं। (9)

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो उग्गतवाणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं दिव्यवचनकराय वर्धमानाय नमः।।

40. निर्मल हृदय करी स्तुति

नैर्मल्यभाव-मभितो धरतीशमाप्तं
दिग् राजिका दश विभो!गगनं विधूल्य:।
सर्वर्तु-पुष्प-फल-पूरित-भूरुहाश्च
व्याह्वान-मर्पित-सुरौघ इत: करोति।।40।।

अरु विहार के समय गगन भी, निर्मल भाव यहाँ धरता
दशों दिशायें धूलि बिना ही, नभ चहुँ ओर सदा करता।
सभी ऋतू के पुष्प फलों से, वृक्ष लधे इक संग दिखते
आओ-आओ इधर आप सब, देव बुलावा भी करते।।40।।

ॐ ह्रीं सर्वदिक् तमोहराय क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ-आप ईश, आप्त के चारों ओर आकाश निर्मलता धारण करता है।(10) दशों दिशाऐं हे विभो ! धूलि रहित होती है। (11), वृक्ष सभी ऋतुओं के पुष्प-फलों से भरे रहते हैं।(12), मुख्य देवों का समूह इस ओर बुलावा करते हैं।(13)

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो दित्ततवाणं जिणाणं।

मंत्र - ॐ ह्रीं नैर्मल्यमन: कराय वर्धमानाय नम:।।

41. धर्म चक्र प्रवर्तनकरी स्तुति

नाशीर्वच: प्रहसनं प्रविलोकवार्ता
तीर्थप्रवर्तनपरो जगतोऽधिनाथ:।
पश्यन्तु तस्य ककुभन्तर-भासमानं
तेजोऽधिकाग्र-गमनं पृथुधर्मचक्रम्।।41।।

नहीं कोई आशीष वचन हैं, हँसे देख कर बात नहीं
फिर भी तीर्थ प्रवर्तन होता, तीन जगत के नाथ यही।

देखो-देखो यही दिखाने, धर्म चक्र आगे चलता
अति प्रकाश चहुँ ओर फैलता, सभी दिशा जगमग करता।।41।।

ॐ ह्रीं धर्मचक्रप्रवर्तकाय क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ-न आशीष वचन देते हैं, न हँसते हैं, न देखते हैं और न बात करते हैं, फिर भी इस जगत् के अधिनाथ तीर्थ प्रवर्तन में तत्पर हैं। उन तीर्थनाथ के विशाल धर्मचक्र को देखो जो धर्मचक्र सर्व दिशाओं को प्रकाशित कर रहा है और प्रकाश की अधिकता वाला वह आगे चल रहा है। (यहाँ देवकृत चौदह अतिशय दर्शाये हैं।)

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो तत्ततवाणं जिणाणं।

मंत्र - ॐ ह्रीं धर्मचक्र-प्रवर्तकाय वीराय नम:।।

42. सर्वसिद्धि दायक स्तुति

चित्तं मदीयमिह लीनमुत त्वयि स्यात्
त्वद्रूपभा मयि मन:-परमाणु-देशे।
जानामि नो किमिति संघटते समेति
किं वाम्रबीज-गणनेन रसं बुभुक्षो:।।42।।

मेरा चित्त आप में हे प्रभु! लीन हुआ क्या पता नहीं
या फिर आप रूप की आभा, मन में आती पता नहीं।
कैसा क्या यह घटित हो रहा, नहीं पता कुछ मुझको देव!
आम गुठलियों को क्या गिनना रस चखने की इच्छा एव।।42।।

ॐ ह्रीं अतितृप्तिकराय क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ - इस भक्ति में मेरा चित्त आप में लीन हुआ है अथवा आपके रूप की

आभा मेरे मन के परमाणु प्रदेशों में समा रही है। क्या घटित हो रहा है? मैं नहीं जानता हूँ। ठीक भी है रस चखने वाले को आम की गुठलियों को गिनने से क्या प्रयोजन ?

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो महातवाणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं असि आ उ सा महावीराय नमः।।

43. आत्मगुणों की शक्तिवर्धक स्तुति

भक्तिश्च सा स्मर-रुषाग्नि-घनौघवर्षा
मुक्तिश्च सा स्तवनतः स्वयमेति हर्षात्।
शक्तिश्च तृप्यतितरां गुणपूर्णतायां
ज्ञप्तिश्च विंदति भृशं तव चेतनाभाम्।।43।।

भक्ति वही जो काम क्रोध की, अग्नि बुझाने वर्षा हो
मुक्ति वही जो संस्तुति करते, स्वयं आ रही हर्षित हो।
आप गुणों की पूर्ण प्राप्ति में, तुष्ट करे जो शक्ति वही
आप चेतना की आभा का, अनुभव करता ज्ञान वही।।43।।

ॐ ह्रीं आत्मगुणवर्धकाय क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ-भक्ति तो वही है, जो काम और क्रोध की अग्नि के लिए घनीभूत वर्षा हो। मुक्ति भी वही है, जो आपके स्तवन से स्वयं हर्ष-हर्ष से चली आए। शक्ति उसी का नाम है जो आपके गुणों की पूर्णता में खूब तृप्त करें। जानना भी वही है, जिससे आपकी चेतना की आभा अच्छी तरह अनुभव में आए।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो घोरतवाणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं अनन्तशक्ति-सम्पन्नाय जिनाय नमः।।

44. निश्चिन्त करने वाली स्तुति

भृत्योऽपि भूपतिमरं तु सदाश्रयामि
प्रोत्थाय मस्तक-मतीव-मदेन याति।
त्रैलोक्यनाथ-पद-पंकज-भक्ति-भक्तो
निश्चिन्तितां यदि दधाति तु विस्मयः किम्।।44।।

मैं राजा के निकट रह रहा, यही सोचकर नौकर भी
अपना मस्तक ऊँचा करके, गर्व धारकर चले तभी।
तीन लोक के नाथ आपके, चरण कमल भक्ती वाला
भक्त यहाँ निश्चिन्त बना यदि, क्या विस्मय प्रभु रखवाला।।44।।

ॐ ह्रीं भक्तचिन्तापहरणाय क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ-मैं तो राजा का सदा निकट से आश्रय लेता हूँ, ऐसा नौकर भी मुख ऊपर करके बड़े मद में चलता है। फिर यहाँ तीन लोक के नाथ के चरण कमलों की भक्ति करने वाला भक्त यदि निश्चिन्तता धारण करता है तो इसमें विस्मय क्या करना ?

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो घोरपरक्कमाणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं सर्वचिन्ताविमुक्ताय जिनाय नमः।।

45. हिंसा नाशक स्तुति

सत्यं त्वया सुविहिताऽत्र मुनेरहिंसा
बाह्यान्तरङ्ग-यम-माप्य समाचरत् ताम्।
अन्तः प्रभाव इति केवलबोध-सूति-
र्यज्ञार्थ-हिंसन-निवृत्ति-बहि-र्विभूतिः।।45।।

सत्य कहा है आप वीर ने, मुनि का एक अहिंसा धर्म
भीतर बाहर संयम पाकर, आप बढ़ाये उसका मर्म।

उसी धर्म से अन्तरंग में, केवलज्ञान प्रकाश हुआ
यज्ञों की हिंसा रुक जाना, बाहर धर्म प्रभाव हुआ।।45।।

ॐ ह्रीं अहिंसा-स्वभावाय क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ-आपने इस जगत् में मुनि के लिए अहिंसा का जो उपदेश दिया है वह सत्य ही दिया है। आपने अन्तरंग और बाह्य यम प्राप्त करने उस अहिंसा का ही आचरण किया था। उसी अहिंसा का यह अंतरंग प्रभाव है कि इस प्रकार केवलज्ञान आत्मा में उत्पन्न हुआ और यज्ञों के लिए की जाने वाली हिंसा रुक गई, यह उस अहिंसा का बाह्य प्रभाव था।

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो घोर गुण बंभयारीणं जिणाणं।

मंत्र - ॐ ह्रीं अहिंसापरमस्वभावाय जिनाय नमः।।

46. मनोरथ सफलकरी स्तुति

ज्ञानस्य वा सुखगुणस्य च कस्यचिद्य
पर्यायमात्र कलिकामह-माप्तुकामः।
अन्तस्त्वयि स्वगुण-पर्यय-भासमाने-
प्यस्मादृशः कथमहो नु भवेत् सतृष्णः।।46।।

सुख गुण की या ज्ञान गुणों की, किसी गुणों की भी पर्याय
एक समय की कणी मात्र ही, तव गुण की मुझमें आ जाय।
अपनी ही गुण-पर्यायों से, भीतर आप प्रकाशित हो
फिर भी मुझ जैसा कैसे यूं, तृष्णा पीड़ित रहे अहो।।46।।

ॐ ह्रीं सर्वमनोरथपूर्तिकराय क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ-ज्ञान गुण की हो या सुख गुण की, किसी भी एक गुण की पर्याय मात्र कणिका को मैं चाह रहा हूँ। अहो ! आप तो अपने गुण-पर्यायों से अन्तरंग में प्रकाशमान हैं। ऐसा होने पर भी मेरे जैसा तृष्णा सहित बना रहे, यह कैसे हो सकता है ?

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो मणबलीणं जिणाणं।

मंत्र - ॐ ह्रीं स्वगुणपर्यय-भासमानाय वीराय नमः।।

47. मुख नेत्रादि पीड़ा विनाशक स्तुति

अत्यन्त-पूत- चरणं तव सर्व-वन्द्यं
चित्ते निधाय यदहं स्वमुखं विपश्यन्।
उल्लासयामि मुखदर्पण- दर्शनात्ते
सीदामि साम्यविकलात् स्वमुखेऽतिवीर!।।47।।

अति पवित्र जो चरण कमल हैं, वन्दनीय नित सदा रहे
उनको चित में धारणा करके, अपना मुख हम देख रहे।
अति उल्लासित मम मन होता, किन्तु आप मुख दर्पण देख
आप सरीखा साम्य हमारे, मुख पर नहीं देख कर खेद।।47।।

ॐ ह्रीं साम्यमुखाय क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ - इस पृथ्वी पर सभी जनों से वन्दनीय आपके अत्यन्त पवित्र चरण कमल को अपने चित्त में धारकर के जब मैं अपना मुख उन चरणों में देखता हूँ तो बहुत ही उल्लसित होता हूँ। किन्तु हे अतिवीर ! आपके मुख दर्पण के दर्शन से अपने मुख पर साम्य की कमी देखने से मैं खेद-खिन्न होता हूँ।

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो वच बलीणं जिणाणं।

मंत्र - ॐ नमो भगवते वीर जिनाय नमः।।

48. सौभाग्यवर्धक स्तुति

सद्-द्रव्यसंयम-पथे प्रथमं प्रयुज्य
स्वं भावसंयमनिधौ तदनुव्यधायि।
नोल्लंघयन् क्रमविधिं क्रमविद् विधिज्ञो
मार्तण्डवच्चरति वै महतां स्वभावः।।48।।

पहले आप द्रव्य संयम के, पथ पर खुद को चला दिए
तभी भाव संयम की निधि भी, आप स्वयं ही प्राप्त किए।
जो क्रम जाने विधि को जाने, क्या उल्लंघन कर सकता
महापुरुष का यह स्वभाव है, सूरज सम पथ पर चलता।।48।।

ॐ ह्रीं द्रव्यभावसंयम निधि प्राप्ताय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–समीचीन द्रव्य संयम के पथ पर अपने आप को सर्वप्रथम नियुक्त किया। उसके अनुरूप आपने स्वयं को भाव संयम की निधि में लगाया। क्रम को जानने वाले और विधि के ज्ञाता पुरुष सूर्य के समान कभी क्रम विधि का उल्लंघन करते हुए नहीं चलते हैं। वास्तव में महान् पुरुषों का यह स्वभाव है।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो काय बलीणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः सौभाग्यसंपद्कराय वीराय नमः।।

49. अकास्मिक फल प्रदायी स्तुति

सापेक्षतोऽपि निरपेक्षगतोऽसि नूनं
बद्धोपि मुक्त इव मुक्तिरतोऽसि बद्धः।
एकोऽप्यनन्त इति भासि न ते विरोधः
स्वात्मानुशासनयुते जिनशासनेऽपि।।49।।

होकर के सापेक्ष आप प्रभु, सबसे ही निरपेक्ष हुए
कर्म बन्ध से बद्ध मुक्त से, मुक्ती में रत बद्ध हुए।
होकर एक अनन्त भासते, इसमें कोई विरोध नहीं
आतम अनुशासन से युत हो, जिनशासन से युक्त वहीं।।49।।

ॐ ह्रीं परस्पर–विरुद्ध–धर्मसहिताय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–आप सापेक्ष होते हुए भी निरपेक्ष हुए हो। निश्चित ही आप बद्ध होकर मुक्त जैसे दिखते हो आप मुक्ति में रत होते हुए भी बद्ध हो, आप एक होकर भी अनन्त दिखते हो। इसमें आपको कोई विरोध नहीं है। आप अपनी आत्मा के अनुशासन से युक्त होने पर भी जिनशासन में भी हो।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो आमोसहिपत्ताणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं श्रीं अनाहतविद्यायै अर्हं नमः।

50. धर्मानुराग वर्धक स्तुति

दृष्टोऽपि नो श्रुतिगतो न कदापि पूर्वं
स्पृष्टो मया न महिमानमहं न वेद्मि।
देवेश! भक्तिरसनिर्भर–मानसेऽस्मिन्
प्रत्यक्षतोऽप्यधिकरागमतिः परोक्षे।।50।।

पहले नहीं आपको देखा, नहीं सुना है कभी कहीं
नहीं छुआ है कभी आपको, जानी महिमा कभी नहीं।
भक्ति सुरस से भरे हुये इस, मेरे मन में आप मुनीश
नहीं हुए प्रत्यक्ष तथापि, मति में राग अधिक क्यों ईश।।50।।

ॐ ह्रीं आश्चर्यकर महिमा सहिताय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–मैंने आपको कभी देखा नहीं है, पहले कभी भी आपका नाम नहीं सुना है, आपको छुआ भी नहीं है और न मैं आपकी महिमा को जाना है। फिर भी हे देवेश ! भक्ति से भरे मेरे मन में प्रत्यक्ष से भी अधिक राग–बुद्धि परोक्ष में हो रही है।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो खेल्लोसहिपत्ताणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं श्रीं वीरसन्मति महावीराय नमः।।

51. विमुक्त व्यक्ति मेलापक स्तुति

अद्यापि ते प्रवचनाम्बु मन: पिपित्सा
पीत्वाऽपि तृष्यति विलोक्य पुन-र्दिदृक्षा।
एतन्मनोरथयुगस्य यदा हि पूर्ति:
साक्षाद् भवेन्मम विमुक्तिकथा तदाऽलम्।।51।।

तेरे वचन नीर को पीने, की इच्छा पी-पी कर भी
तृप्त नहीं होता मेरा मन, पुन: देखना लख कर भी।
दो ही मेरी मनो कामना, जब पूरण होंगी साक्षात्
मुक्ति कथा भी मेरी पूरी, हो जाएगी मेरी बात।।51।।

ॐ ह्रीं साक्षात् दर्शनकराय क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ-आज भी आपके प्रवचन जल को पीने की इच्छा बनी है। मन आपके वचन जल को पी-पी कर भी प्यासा बना रहता है। आपको देखकर भी पुन: देखने की इच्छा बनी रहती है। आपके वचनामृत को पीने की और आपको देखने की ये दोनों मनोकामना मेरी जब साक्षात् पूर्ण हो जाएगी मेरी मुक्ति की कथा भी उसी समय समाप्त हो जाएगी।

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो जल्लोसहिपत्ताणं जिणाणं।

मंत्र - ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं नम:।।

52. परलोक सुख करी स्तुति

पुण्यं त्वयोदित-तपोयम-पालनेन
भक्त्योर्जितेन भविनां शिवसाधनं ते।
पुण्यं निदानसहितं सुरसौख्यकामं
बन्धप्रदं न हि नयं समवैति जैन:।।52।।

कहा आपने जैसा जिनवर, मान उसे तप व्रत धरता
भव्यजनों की भक्ति का वह, पुण्य मोक्ष साधन बनता।

सुर सुख को जो चाह रहा हो, कर निदान यदि करता पुण्य
वही बन्ध का करण है नय, नहीं जानते जैनी पुण्य।।52।।

ॐ ह्रीं सकलनय विलसिताय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ-आपके द्वारा कहे हुए तप और यम का उत्साह के साथ पालन करने से और आपकी भक्ति से भाग्य जीवों को जो पुण्य होता है, वह मोक्ष का साधन बनता है। जो पुण्य निदान सहित और देह सुख की चाह वाला है वह बन्ध का कारण है। यह नय (नीति) जैन भी नहीं जानते हैं।

ऋद्धि - ॐ ह्रीं णमो मल्लोसहिपत्ताणं जिणाणं।

मंत्र - ॐ ह्रीं श्रीं द्वादशांगविद्याधारकाय जिनाय नम:।।

53. रत्नत्रय प्रदायी स्तुति

सम्यक्त्वमेव जिनदेव! तवैव भक्ति-
र्ज्ञानं तदेव चरितं व्यवहारमित्थम्।
तावत् करोतु भविकस्त्वदभेदबुद्ध्या
मुक्त्यंगना-रमणतात्म-सुखं न यावत्।।53।।

हे जिन! भक्ति आपकी नित ही, सम्यग्दर्शन कही गई
वही ज्ञान है वही चरित है, यह व्यवहारी बुद्धि रही।
रख अभेद बुद्धि से जिन में, तब तक यह व्यवहार करो
मुक्ति वधू का रमण आत्म सुख, जब तक ना तुम प्राप्त करो।।53।।

ॐ ह्रीं रत्नत्रयपूर्णाय क्लीं-महाबीजाक्षर-सहिताय वर्धमान-महावीर-जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ - हे जिनदेव ! आपकी भक्ति ही सम्यग्दर्शन है। वह भक्ति ही सम्यग्ज्ञान है और उस भक्ति को करना ही सम्यक् चारित्र है। इस व्यवहार को भव्यजन आपमें अभेद बुद्धि के साथ तब तक करता रहे जब तक कि मुक्ति स्त्री में रमणता वाला आत्मसुख न प्राप्त हो जाए।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो विप्पोसहितपत्ताणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं श्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राय नमः।।

54. प्रशंसा वर्धक स्तुति

रूपेण मुह्यसि जनं त्वममोह इष्टो
लोभं विवर्धयसि भूरि निशाम्य वाचम्।
तत्राप्युशन्ति सुजनं सुजना भवन्तं
दोषा गुणाय ननु चन्द्रकरैर्निदाघे।।54।।

मोहित करते आप रूप से, सभी जनों को हे निर्मोह!
सुन कर वचन और सुनने का, लोभ बढ़ाते हे निर्लोभ!।
फिर भी श्रेष्ठ पुरुष है कहते, श्रेष्ठ पुरुष केवल हैं आप
दोष गुणों के लिए हरे ज्यों, निशा चन्द्रमा से संताप।।54।।

ॐ ह्रीं श्रीगणधरमुनि सेविताय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–आप रूप से लोगों को मोहित करते हो फिर भी आप मोह रहित माने जाते हो। आप वचन सुनाकर लोभ को और बढ़ाते रहते हो। फिर भी सज्जन पुरुष आपको ही सज्जन मानते हैं। सच ही है। दोष भी गुण के लिए होते हैं। क्या दोषा (रात्रि) गर्मी के दिन में चन्द्रमा की किरणों के द्वारा गुण वाली नहीं हो जाती है?

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो सव्वोसहि पत्ताणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं सर्वर्द्धिसहिताय महावीराय नमः।।

55. गुप्त सम्पदा दायक स्तुति

तुभ्यं ददामि कथयन् प्रददाति कश्चिन्
मौनेन दित्सति भवानति–गुप्तरूपात्।

सार्वाय वा रविरिहैव निरीह–बन्धु–
र्भव्याय तेन भुवने परमोऽसि दाता।।55।।

तुमको देता हूँ यह कहता, तब कोई कुछ देता है
किन्तु आप दें गुप्त रूप से, मौन धार यह देखा है।
ज्यों रवि सबका हित करता है, बिन इच्छा के बन्धु बना
उसी तरह भव्यों के हित में, तुम सम दाता कोई ना।।55।।

ॐ ह्रीं श्री सार्वाय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–मैं तुम्हें दे रहा हूँ, ऐसा कहते हुए कोई कुछ देता है किन्तु आप भगवन् अति गुप्त रूप से मौन पूर्वक देते हो। जैसे रवि सभी के हित के लिये होता है और एक निरीह बन्धु है वैसे ही आप भव्यजीवों के लिए निरीह बन्धु हैं। इस लोक में इसी कारण से आप परम दाता हैं।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो मुहणिव्विसड्ढि जिणाणं ।

मंत्र – ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं वीर जिणाणं नमः।

56. याचक संतुष्टि करी स्तुति

दित्सा प्रभो! त्वयि यदि प्रविदातुमस्ति
दातव्य एव मम वै मनसि स्थितार्थः।
दाता समो न तव मत्सम–याचको न
कांक्षाम्यहं किमपि नो भवतो भवन्तम्।।56।।

फिर भी यदि तुम इच्छा करते, देने की मुझको कुछ भी
दे ही देना आप प्रभू जी, जो मेरे मन में कुछ भी।
दाता तुम सम और नहीं है, और नहीं याचक मुझ सा
चाह नहीं कुछ तुमसे चाहूँ, तुमको या बनना तुम सा।।56।।

ॐ ह्रीं अयाचकवृत्तये क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–हे प्रभो ! आप के पास देने के लिए तो है और यदि आपकी देने की इच्छा हो तो मेरे मन में जो पदार्थ स्थित है उसे दे ही देना। आपके जैसा दाता नहीं है और मेरे जैसा कोई याचक भी नहीं है। मैं आपसे कुछ भी नहीं चाहता हूँ, मैं आपको ही चाह रहा हूँ।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो दिट्ठिणिव्विसड्ढि जिणाणं ।

मंत्र – ॐ ह्रीं णमो अरहंताणं वड्ढमाणं नमः।

57. यात्रा विघ्न निवारक स्तुति

एवं चतुर्दशतिथा–वपहृत्य योगान्
ध्यानात् तुरीयशुभशुक्ल–वशात् प्रमुक्तः।
पावापुर–प्रमद–पद्म–सरोवरस्थो
निर्वाण–माप्य भुवनस्य शिरः प्रतस्थे।।57।।

योगों को संकोचित करके, इस विधि चौदस की तिथि को
चौथे शुक्ल ध्यान को ध्याकर, आप विमुक्त किए खुद को।
पावापुर के पद्म सरोवर, पर संस्थित प्रभु होकर के
आप महा निर्वाण प्राप्त कर, ठहरे लोक शिखर जा के।।57।।

ॐ ह्रीं पावापुर पद्म सरोवर स्थित निर्वाण प्राप्ताय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ– इस प्रकार चतुर्दशी की तिथि में योगों को संकुचित करके चौथे शुभ शुक्ल ध्यान के कारण से मुक्त हुए। पावापुर के आनन्ददायी पद्म सरोवर पर स्थित होते हुए आप निर्वाण प्राप्त करके लोक के शिखर पर ठहर गए।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो आसीविसाणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं सिद्धचक्राय वीराय नमः।

58. अन्तराय निवारक स्तुति

नष्टाष्टकर्मरिपुबाधक! ते नमोऽस्तु
स्वर्गापवर्ग–सुखदायक! ते नमोऽस्तु
विश्वैक–कीर्ति–गुण नायक! ते नमोऽस्तु
विघ्नान्तराय–विधि–वारक!ते नमोऽस्तु।।58।।

अष्ट कर्म रिपु बाधक नाशक, हे प्रभु तुमको नमन करूँ
स्वर्ग मोक्ष सुख के हो दायक, हे प्रभु तुमको नमन करूँ।
आप कीर्ति गुण नायक जग में, हे प्रभु तुमको नमन करूँ
अन्तराय विघ्नों के वारक, हे प्रभु तुमको नमन करूँ।।58।।

ॐ ह्रीं अनन्तचतुष्टय सहिताय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ – बाधा उत्पन्न करने वाले अष्ट कर्म शत्रुओं को नष्ट करने वाले हे भगवन्! आपको नमस्कार हो। स्वर्ग और मोक्ष के सुख देने वाले हे भगवन् आपको नमस्कार हो। विश्व में एकमात्र कीर्ति गुण के नायक हे भगवन् आपको नमस्कार हो। विघ्न करने वाले अन्तराय कर्म को रोक देने वाले हे भगवन् आपको नमस्कार हो।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो दिट्ठि विसाणं जिणाणं ।

मंत्र – ॐ ह्रीं अनन्तचतुष्टय सहिताय वीराय नमः।

59. विजेता कारक स्तुति

जेता त्वमेव समनः सकलेन्द्रियाणां
नेता त्वमेव गुणकांक्षि–तपोधनानाम्।
भेत्ता त्वमेव घनकर्ममहीधराणां
ज्ञाता त्वमेव भगवन्! सचराचराणाम्।।59।।

मन से सहित सकल इन्द्रिय के, तुम ही एक विजेता हो
जो गुण चाहें ऐसे मुनि के, एक मात्र तुम नेता हो।
घनी भूत जो कर्म शैल थे, उनको तुमने तोड़ दिया
सकल चराचर के ज्ञाता हो, निज में निज को जोड़ लिया।।59।।

ॐ ह्रीं लोकालोकज्ञायकाय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–मन सहित इन्द्रियों को जीतने वाले आप हो। गुणों की आकांक्षा करने वाले तपस्वियों के नेता आप ही हो। घनीभूत कर्म पर्वतों के भेदन करने वाले आप ही हो। हे भगवन् ! चराचर समस्त जगत् के ज्ञान आप ही हो।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो खीरसवीणं जिणाणं ।

मंत्र – ॐ ह्रीं विजितेन्द्रिय वर्धमानाय नमः।

60. अन्य मन्त्र तन्त्र प्रभाव रोधक स्तुति

हे वीर! सिद्ध–गतिभूषण! वीतकाम!
तुभ्यं नमोऽन्त्य–जिन–तीर्थकर!प्रमाण!।
सर्वज्ञदेव! सकलार्तविनाशकाय
तुभ्यं नमो नतमुनीन्द्र–गणेशिताय।।60।।

सिद्धगति के भूषण तुम हो, काम रहित हो तुम हो वीर
हे अन्तिम जिन तीर्थंकर प्रभु, तुम प्रमाण मम हर लो पीर।
सभी दुखों के नाशक तुमको, देव हमारे तुम्हें नमन
गणधर और मुनीश्वर नमते, हे परमेश्वर तुम्हें नमन।।60।।

ॐ ह्रीं वीतराग सर्वज्ञदेवाय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–हे वीर ! हे सिद्ध गति के आभूषण ! हे काम रहित ! हे अन्तिम तीर्थंकर !

हे प्रमाण ! हे सर्वज्ञदेव ! आपके लिए नमस्कार हो। सकल दुःखों का विनाश करने वाले तथा मुनीन्द्र–गणधरों से नमस्कृत आपके लिए नमस्कार हो।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो महुरसवीणं जिणाणं ।

मंत्र – ॐ ह्रीं अनन्तवीर्याय परचक्रप्रमर्दनाय नमः।

61. जल भय निवारक स्तुति

ते तीर्थपुण्यजलमज्जनशुद्धभूता
भव्या: पुरा समभवन् कलिपापपूता:।
नाना–नयोपनय–सप्त–विभङ्ग–भङ्गे
तीर्थे निमज्जनविधे: किमु वञ्चित: स्याम्।।61।।

आप तीर्थ के पुण्य नीर में, डूब डूब कर शुद्ध हुए
भव्य हुए जितने भी पहले, धो कलि पाप विशुद्ध हुए।
नाना नय उपनय अरु जिसमें, सप्त भंग की लहरें हों
ऐसे तीरथ में डुबकी हम, लेने में क्यों वंचित हों ?।।61।।

ॐ ह्रीं धर्म–तीर्थाधिपतये–क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ – आपके तीर्थ रूपी पुण्य जल में डूबकर शुद्ध हुए भव्य जीव पहले कलिकाल के पाप से अपने को पवित्र किये हैं। अनेक नय, उपनय, सप्त भंग की तरंगों के तीर्थ में डूबने की विधि से फिर मैं क्यों वंचित रहूँ।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो अमिय–सवीणं जिणाणं ।

मंत्र – ॐ ह्रीं अर्हते भगवते जलभयं स्तम्भय–स्तम्भय नमः।

62. संसार भय तारक स्तुति

बालेऽपि पालक इति प्रतिभासते यो
यो यौवनेऽपि मदकाम–भटाभिमर्दी।

संसार–सागर–तट–स्थित–पुण्यभाजां
सिद्धिं प्रपित्सुरभवत् तमहं नमामि।।62।।

बाल्य अवस्था में भी पालक, से प्रतिभासित होते आप
भर यौवन में भी मदमाते, काम सुभट को जीते आप।
पुण्यवान जो खड़े हुए हैं, संसृति सागर के तट पर
उन्हें सिद्धि में पहुँचाते थे, नमन आप को कर शिर धर।।62।।

ॐ ह्रीं श्रीं भवभयनिमज्जनतारकाय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–जो बालपन में भी पालक की तरह दिखते थे। जो यौवन में भी घमण्ड और काम योद्धाओं का मर्दन किए हैं। जो संसार सागर के तट पर स्थित पुण्यात्मा जीवों को जो सिद्धि प्राप्त कराने की इच्छा करते थे उन भगवन् को मैं नमस्कार करता हूँ।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो सप्पिसवीणं जिणाणं ।

मंत्र – ॐ ह्रीं श्री स्याद्वादिने जिनशासन वीराय नमः।।

63. उत्तम शरण दायक स्तुति

लोकोत्तमोऽसि जगदेकशरण्यभूत:
श्रेयान् त्वमेव भवतारकमुख्यपोत:।
ध्यानेऽपि चिन्तनमतौ सुकथा–प्रसङ्गे
त्वां संस्मरामि विनमामि च चर्चयामि।।63।।

तीन लोक में उत्तम तुम हो, पूर्ण जगत में एक शरण
भव तरने को इक जहाज हो, श्रेष्ठ तुम्ही हो करूँ वरण।
चिन्तन में भी ध्यान समय भी, और कथा के करने में
तुमको याद करूँ मैं प्रणमूँ, चर्चा करूँ सदा ही मैं।।63।।

ॐ ह्रीं श्री लोकोत्तमशरणाय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–आप लोकोत्तम हो, जगत् में एक मात्र शरण्यभूत हो, आप ही श्रेष्ठ हो, संसार सागर से तारने वाले मुख्य जहाज हो। ध्यान में, चिन्तन की बुद्धि में और सुकथा के प्रसंग में भी मैं आपको ही स्मरण करता हूँ। आपको ही नमस्कार करता हूँ और आपका ही ध्यानपूर्वक अनुशीलन करता हूँ।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो अक्खीणमहाणसाणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं श्री लोकोत्तमशरणभूताय जिनाय नमः।

64. सर्व कार्य सफलतादायक स्तुति

य: संस्तवं प्रकुरुते भुवि भावभक्त्या
संस्थाप्य चित्त–कमले श्रृणुतेऽत्र चैतम्।
विघ्नं विहत्य सफलीभवतीष्टकार्ये,
ज्ञानं सुखं स लभते क्षणवर्धमानम्।।64।।

भाव भक्ति से इस प्रकार जो, वीर प्रभू का यह संस्तव
हृदय कमल में धार आपको, करता सुनता तव वैभव।
विघ्नों को वह नष्ट करे अरु, इष्ट कार्य में रहे सफल
हर क्षण बढ़ते ज्ञान सुखों का, पाओ तुम 'प्रणम्य' शिव फल।।64।।

ॐ ह्रीं श्री प्रतिक्षणवर्धमान–ज्ञानसुखादिगुणाय क्लीं–महाबीजाक्षर–सहिताय वर्धमान–महावीर–जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थ–इस पृथ्वी पर जो भव्य जीव भाव भक्ति के साथ अपने चित्त कमल में भगवान् को स्थापित करके इस स्तोत्र को करता है और सुनता है वह विघ्नों को नष्ट करके इच्छित कार्य में सफल होता है तथा हर क्षण बढ़ने वाले ज्ञान और सुख को प्राप्त करता है।

ऋद्धि – ॐ ह्रीं णमो अक्खीणमहालयाणं जिणाणं।

मंत्र – ॐ ह्रीं श्री पंचनामधेयाय इष्टसिद्धि कराय वीराय नमः।

वलय अर्घ

विद्याब्धि–सूरि–पद–पङ्कज–सौरभालि–
शिष्य–प्रणम्य–मुनिना जिनदेव भक्त्या।
श्री वर्धमान–जिन–संस्तवनं व्यधायि
तस्य त्रिरत्र वलयेऽर्चनयोल्लसामि।।

ॐ ह्रीं द्वात्रिशंत्दल कमलाधिपतये श्री वर्धमान जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

आर्या छन्द

श्री वर्धमानसंस्तुति–रियं कृता प्रणम्यवार्धिना मुनिना।
आचार्य प्रमुखार्य–प्रगुरु–विद्यावार्धि–शिष्येण।।
वीरे निर्वाणगते शून्य चतुः पञ्चद्वितमे वर्षे।
मालवभूरतलामे पौषे मासि सितसप्तम्याम्।।

ॐ ह्रीं चतुः षष्टि ऋद्धि सहित वर्धमान जिनेन्द्राय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(जाप मंत्र 108 बार लौंग अथवा पीले चाँवल से)

ॐ ह्रीं चतुः षष्टि ऋद्धि सहित वर्धमान जिनेन्द्राय नमः।

ऋद्धि मंत्र

1. ॐ ह्रीं णमो ओहिबुद्धि जिणाणं।
2 ॐ ह्रीं णमो मणपज्जय जिणाणं ।
3. ॐ ह्रीं णमो केवलणाण जिणाणं।
4. ॐ ह्रीं णमो कोट्टबुद्धि जिणाणं।
5. ॐ ह्रीं णमो बीजबुद्धि जिणाणं।
6. ॐ ह्रीं णमो पादाणुसारीणं जिणाणं।
7. ॐ ह्रीं णमो संभिण्णसोदाराणं जिणाणं।
8. ॐ ह्रीं णमो दूरासादणमदि जिणाणं।
9. ॐ ह्रीं णमो दूरफासत्तमदि जिणाणं।
10. ॐ ह्रीं णमो दूरघाणत्तमदि जिणाणं।
11. ॐ ह्रीं णमो दूरसवणत्तमदि जिणाणं।
12. ॐ ह्रीं णमो दूरदरसित्तमदि जिणाणं।
13. ॐ ह्रीं णमो दसपुव्वीणं जिणाणं।
14. ॐ ह्रीं णमो चउदसपुव्वीणं जिणाणं।
15. ॐ ह्रीं णमो अट्ठंगमहाणिमित्तकुसलाणं जिणाणं।
16. ॐ ह्रीं णमो पण्णसमणाणं जिणाणं।
17. ॐ ह्रीं णमो पत्तेयबुद्धाणं जिणाणं।
18. ॐ ह्रीं णमो वादित्तबुद्धीणं जिणाणं।
19. ॐ ह्रीं णमो अणिमाइड्ढि जिणाणं।
20. ॐ ह्रीं णमो महिमाइड्ढि जिणाणं।
21. ॐ ह्रीं णमो लघिमाइड्ढि जिणाणं।
22. ॐ ह्रीं णमो गरिमाइड्ढि जिणाणं।
23. ॐ ह्रीं णमो पत्तरिड्ढि जिणाणं।
24. ॐ ह्रीं णमो पाकामड्ढि जिणाणं।
25. ॐ ह्रीं णमो ईसत्तड्ढि जिणाणं।
26. ॐ ह्रीं णमो वसित्तड्ढि जिणाणं।
27. ॐ ह्रीं णमो अप्पडिघादड्ढि जिणाणं।
28. ॐ ह्रीं णमो अंतड्ढाणड्ढि जिणाणं।
29. ॐ ह्रीं णमो कामरूवड्ढि जिणाणं।
30. ॐ ह्रीं णमो गमणगामिड्ढि जिणाणं।
31. ॐ ह्रीं णमो जलचारणड्ढि जिणाणं।

32. ॐ ह्रीं णमो जंघाचारणड्ढि जिणाणं।
33. ॐ ह्रीं णमो पुप्फफल चारणड्ढि जिणाणं।
34. ॐ ह्रीं णमो अग्गिधूमचारणड्ढि जिणाणं।
35. ॐ ह्रीं णमो मेघधारचारणड्ढि जिणाणं।
36. ॐ ह्रीं णमो तंतुचारणड्ढि जिणाणं।
37. ॐ ह्रीं णमो सिहाचारणड्ढि जिणाणं।
38. ॐ ह्रीं णमो पवणचारणड्ढि जिणाणं।
39. ॐ ह्रीं णमो उग्गतवाणं जिणाणं।
40. ॐ ह्रीं णमो दित्ततवाणं जिणाणं।
41. ॐ ह्रीं णमो तत्ततवाणं जिणाणं।
42. ॐ ह्रीं णमो महातवाणं जिणाणं।
43. ॐ ह्रीं णमो घोरतवाणं जिणाणं।
44. ॐ ह्रीं णमो घोरपरक्कमाणं जिणाणं।
45. ॐ ह्रीं णमो घोर गुण बंभयारीणं जिणाणं।
46. ॐ ह्रीं णमो मणबलीणं जिणाणं।
47. ॐ ह्रीं णमो वच बलीणं जिणाणं।
48. ॐ ह्रीं णमो काय बलीणं जिणाणं।
49. ॐ ह्रीं णमो आमोसहिपत्ताणं जिणाणं।
50. ॐ ह्रीं णमो खेल्लोसहिपत्ताणं जिणाणं।
51. ॐ ह्रीं णमो जल्लोसहिपत्ताणं जिणाणं।
52. ॐ ह्रीं णमो मल्लोसहिपत्ताणं जिणाणं।
53. ॐ ह्रीं णमो विप्पोसहितपत्ताणं जिणाणं।
54. ॐ ह्रीं णमो सव्वोसहि पत्ताणं जिणाणं।
55. ॐ ह्रीं णमो मुहणिव्विसड्ढि जिणाणं ।
56. ॐ ह्रीं णमो दिट्ठिणिव्विसड्ढि जिणाणं ।
57. ॐ ह्रीं णमो आसीविसाणं जिणाणं।
58. ॐ ह्रीं णमो दिट्ठि विसाणं जिणाणं ।
59. ॐ ह्रीं णमो खीरसवीणं जिणाणं ।
60. ॐ ह्रीं णमो महुरसवीणं जिणाणं ।
61. ॐ ह्रीं णमो अमिय–सवीणं जिणाणं ।
62. ॐ ह्रीं णमो सप्पिसवीणं जिणाणं ।
63. ॐ ह्रीं णमो अक्खीणमहाणसाणं जिणाणं।
64. ॐ ह्रीं णमो अक्खीणमहालयाणं जिणाणं।

जय माला

वर्धमान जिनदेव की जय त्रिशला नन्दन वीर की जय
निज चेतन की परिणत में रत ज्ञानानन्द स्वभाव रहा
सामायिक में ध्यान समय में जिनको चेतन भाव रहा।
ज्ञान चेतना में केलि कर शुद्धातम महावीर की जय।
राग रोग के हरने वाले काम क्रोध मद नाशन हारे।
भव सागर से पार लगाते सन्मति दायी वीर की जय।।

सब जीवों पर करुणा धरते शत्रु पर भी समता रखते
उग्र परिषह विजयी मुनिवर महावीर भगवान की जय।।
बारह वर्ष तपे तप प्रतिदिन केवलज्ञान स्वभाव लिया
पीर हरी चन्दबाला की उपकारी जिनवर की जय।।
गौतम गणधर लख के जिनको सुध-बुध खुद की भूल गए।
शिष्य बन गए यतिवर सबही वर्धमान भगवान की जय।।

जिनकी पूजा भाव लिए चल मेंढक देव महान बना
श्रेणिक, प्रीतिंकर लाखों जन ज्ञान लिए जिनराज की जय।।
ऋजुकूला नदी के तट पर ग्राम जृंभिका में उपजा
केवलज्ञान प्रकाशित जग में श्रमण प्रमुख जिनराज की जय।।
पावापुर निर्वाण भूमि पे तुमने सिद्ध प्रयाण किया।
जन्म मरण तारक जिनवर वर्धमान भगवान की जय।।

ॐ ह्रीं श्रीं वीरसन्मति वर्धमानातिवीर महावीर पंचनामधेयाय वर्धमान जिनेन्द्राय..

श्री निर्वाणक्षेत्र का अर्घ्य

जल गंध अक्षत पुष्प चरु फल, दीप धूपायन धरौं।
'द्यानत' करो निरभय जगत सौं, जोरकर विनती करौं।।
सम्मेदगढ़ गिरनार चम्पा, पावापुरी कैलाश कों।
पूजों सदा चौबीस जिन, निर्वाण भूमि निवास कों।।
ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर निर्वाण क्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्चय महाअर्घ्य

मैं देव श्री अरहन्त पूजूँ, सिद्ध पूजूँ चाव सों।
आचार्य श्री उवझाय पूजूँ, साधु पूजूँ भाव सों।।
अर्हन्त भाषित बैन पूजूँ, द्वादशांग रची गनी ।
पूजूँ दिगम्बर गुरु चरण शिव, हेत सब आशा हनी।।
सर्वज्ञ भाषित धर्म दश-विधि, दयामय पूजूँ सदा।
जजि भावना षोडश रत्नत्रय, जा बिना शिव नहिं कदा।।
त्रैलोक्य के कृत्रिम अकृत्रिम, चैत्य चैत्यालय जजूँ।
पंचमेरु नन्दीश्वर जिनालय, खचर सुर पूजित भजूँ।।
कैलाश श्री सम्मेद गिरी, गिरनार मैं पूजूँ सदा।
चम्पापुरी पावापुरी पुनि, और तीरथ सर्वदा।।
चौबीस श्री जिनराज पूजूँ, बीस क्षेत्र विदेह के।
नामावली इक सहस-वसु जय, होय पति शिवगेह के।।
दोहा- जल गंधाक्षत पुष्प चरु, दीप धूप फल लाय।
सर्व पूज्य पद पूजहूँ, बहु विधि भक्ति बढ़ाय।।

ॐ ह्रीं भावपूजा भाववन्दना त्रिकालपूजा त्रिकालवन्दना करै करावै भावना भावै श्रीअरहन्त जी, सिद्ध जी, आचार्य जी,उपाध्याय जी, सर्व साधु जी पंच-परमेष्ठिभ्यो नमः। प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग, द्रव्यानुयोगेभ्यो नमः। दर्शन विशुद्धयादि षोडश कारणेभ्यो

नमः। उत्तम क्षमादि दशलाक्षण धर्मेभ्यो नमः। सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यग्चारित्रेभ्यो नमः। जल के विषै, थल के विषै, आकाश के विषै, गुफा के विषै, पहाड़ के विषै, नगर नगरी विषै, उर्ध्वलोक, मध्य लोक, पाताल लोक विषै विराजमान कृत्रिम अकृत्रिम जिन चैत्यालय जिन बिम्बेभ्यो नमः। विदेह क्षेत्रे विद्यमान बीस तीर्थंकरेभ्यो नमः। पाँच भरत, पाँच ऐरावत दश क्षेत्र संबंधी तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनबिम्बेभ्यो नमः। नंदीश्वरद्वीप संबंधी बावन जिन-चैत्यालयेभ्यो नमः। पंचमेरु संबंधी अस्सी जिन चैत्यालयेभ्यो नमः। श्री सम्मेद शिखर, कैलाश, चम्पापुर, पावापुर, गिरनार, सोनागिरि, तारंगा, मथुरा आदि सिद्ध क्षेत्रेभ्यो नमः। जैनबद्री, मूड़बद्री, देवगढ़, चन्देरी, पपौरा, हस्तिनापुर, अयोध्या, राजगृही, तारंगा चमत्कार, महावीरजी, पद्मपुरी, तिजारा, अंतरिक्ष पारसनाथ, मक्सी आदि अतिशय क्षेत्रेभ्यो नमः। श्री चारण ऋद्धिधारी सप्त परमर्षिभ्यो नमः। श्रीजिन सहस्रनामेभ्यो नमः। उज्जैन (अपने नगर का नाम) नगर में स्थित समस्त जिनमन्दिर, जिनचैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो नमः अनर्घ्य-पद प्राप्तये सम्पूर्ण अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक कायोत्सर्ग करें (नौ बार णमोकार मन्त्र का जाप करें)

शान्तिपाठ

(शान्तिपाठ बोलते समय पुष्पक्षेपण करते रहना चाहिये)

चौपाई

शान्तिनाथ मुख शशि उनहारी, शील गुण-व्रत संयम-धारी।
लखन एक सौ आठ विराजैं, निरखत नयन कमल-दल लाजैं।।
पंचम चक्रवर्ति पद-धारी, सोलम तीर्थंकर सुखकारी।
इन्द्र-नरेन्द्र पूज्य जिन नायक, नमो शान्ति-हित शान्ति-विधायक।।
दिव्य विटप पहुपन की वरषा, दुन्दुभि आसन वाणी सरसा।

छत्र चमर भामण्डल भारी, ये तुव प्रातिहार्य मनहारी।।
शान्ति जिनेश शान्ति सुखदाई, जगत् पूज्य पूजौ सिरनाई।
परम शान्ति दीजै हम सबको, पढ़ैं तिन्हें पुनि चार संघ को।।

बसन्ततिलका

पूजैं जिन्हें मुकुट-हार किरीट लाके,
इन्द्रादि देव अरु पूज्य पदाब्ज जाके।
सो शान्तिनाथ वर वंश जगत् प्रदीप,
मेरे लिये करहिं शान्ति सदा अनूप।।

इन्द्रवज्रा

संपूजकों को प्रतिपालकों को, यतीनकों औ यतिनायकों को।
राजा प्रजा राष्ट्र सुदेश को ले, कीजे सुखी हे जिन! शान्ति को दे।।
होवै सारी प्रजा को सुख, बलयुत हो धर्मधारी नरेशा।
होवै वर्षा समय पै, तिलभर न रहे व्याधियों का अन्देशा।।
होवै चोरी न जारी, सुसमय वरतै हो न दुष्काल मारी।
सारे ही देश धारैं, जिनवर वृषको जो सदा सौख्यकारी।।

(पुष्पांजलिं क्षिपामि)

दोहा- घातिकर्म जिन नाश करि, पायो केवलराज।
शान्ति करो सब जगत् में, वृषभादिक जिनराज।।

(अब हाथ जोड़कर भगवान् से प्रार्थना करें)

शास्त्रों का हो पठन सुखदा, लाभ सत्संगती का।
सद्व्रतों का सुजस कहके, दोष ढाकूँसभी का।।
बोलूँ प्यारे वचन हित के, आपका रूप ध्याऊँ।
तोलों सेऊ चरण जिनके, मोक्ष जो लों न पाऊँ।।

आर्या छन्द

तव पद मेरे हिय में, मम हिय तेरे पुनीत चरणों में।
तबलौं लीन रहूँ प्रभु, जबलौं न पाया मुक्ति पद मैंने।

अक्षर पद मात्रा से दूषित, जो कछु कहा गया मुझसे।
क्षमा करो प्रभु सो सब, करुणा करि पुनि छुड़ाहु भव दुःख से।।
हे जगबन्धु जिनेश्वर! पाऊँ तव चरण शरण बलिहारी।
मरण समाधि सुदुर्लभ, कर्मों का क्षय सुबोध सुखकारी।।
पुष्पांजलिं क्षिपामि (एक कायोत्सर्ग करें)

विसर्जन पाठ

बिन जाने वा जानके, रही टूट जो कोय।
तुम प्रसाद तैं परम गुरु, सो सब पूरण होय।। 1।।
पूजन विधि जानूँ नहीं, नहिं जानूँ आह्वान।
और विसर्जन हूँ नहीं, क्षमा करो भगवान्।। 2।।
मन्त्रहीन धनहीन हूँ, क्रियाहीन जिनदेव।
क्षमा करहु राखहु मुझे, देहु चरण की सेव।। 3।।
आये जो-जो देवगण, पूजे भक्ति प्रमाण।
ते अब जावहूँ कृपाकर, अपने-अपने थान।। 4।।
श्री जिनवर की आशिका, लीजे शीश चढ़ाय।
भव-भव के पातक कटें, दुःख दूर हो जाय।।
(नौ बार णमोकार मन्त्र का जाप करें)

परिक्रमा विनती (जिनस्तुति) (चौपाई)

मैं तुम चरण-कमल गुणगाय, बहु विधि भक्ति करी मन लाय।
जनम जनम प्रभु पाऊँ तोहि, यह सेवाफल दीजे मोहि।।
कृपा तिहारी ऐसी होय, जामन मरण मिटावो मोहि।
बार-बार मैं विनती करूँ, तुम सेवा भवसागर तरूँ।।
नाम लेत सब दुःख मिट जाय, तुम दर्शन देख्या प्रभु आय।

तुम हो प्रभु देवन के देव, मैं तो करूँ चरण तव सेव।।
मैं आयो पूजन के काज, मेरो जनम सफल भयो आज।
पूजा करके नवाऊँ मैं शीश, मुझ अपराध क्षमहू जगदीश।।
दोहा- सुख देना दुःख मेटना यही आपकी बान।
मो गरीब की वीनती, सुन लीज्यो भगवान्।।
पूजन करते देव की, आदि मध्य अवसान।
सुरगन के सुख भोगकर, पावै मोक्ष निदान।।
जैसी महिमा तुम विषैं, और धरैं नहिं कोय।
सूरज में जो जोति है, नहिं तारागण होय।।
नाथ तिहारे नाम तैं, अघ छिन माहि पलाय।
ज्यों दिनकर प्रकाशतैं, अंधकार विनशाय।।
बहुत प्रशंसा क्या करूँ, मैं प्रभु बहुत अज्ञान।
पूजाविधि जानूँ नहीं, शरण राखि भगवान्।।
एक कायोत्सर्ग करें, (नौ बार णमोकार मन्त्र का जाप करें)